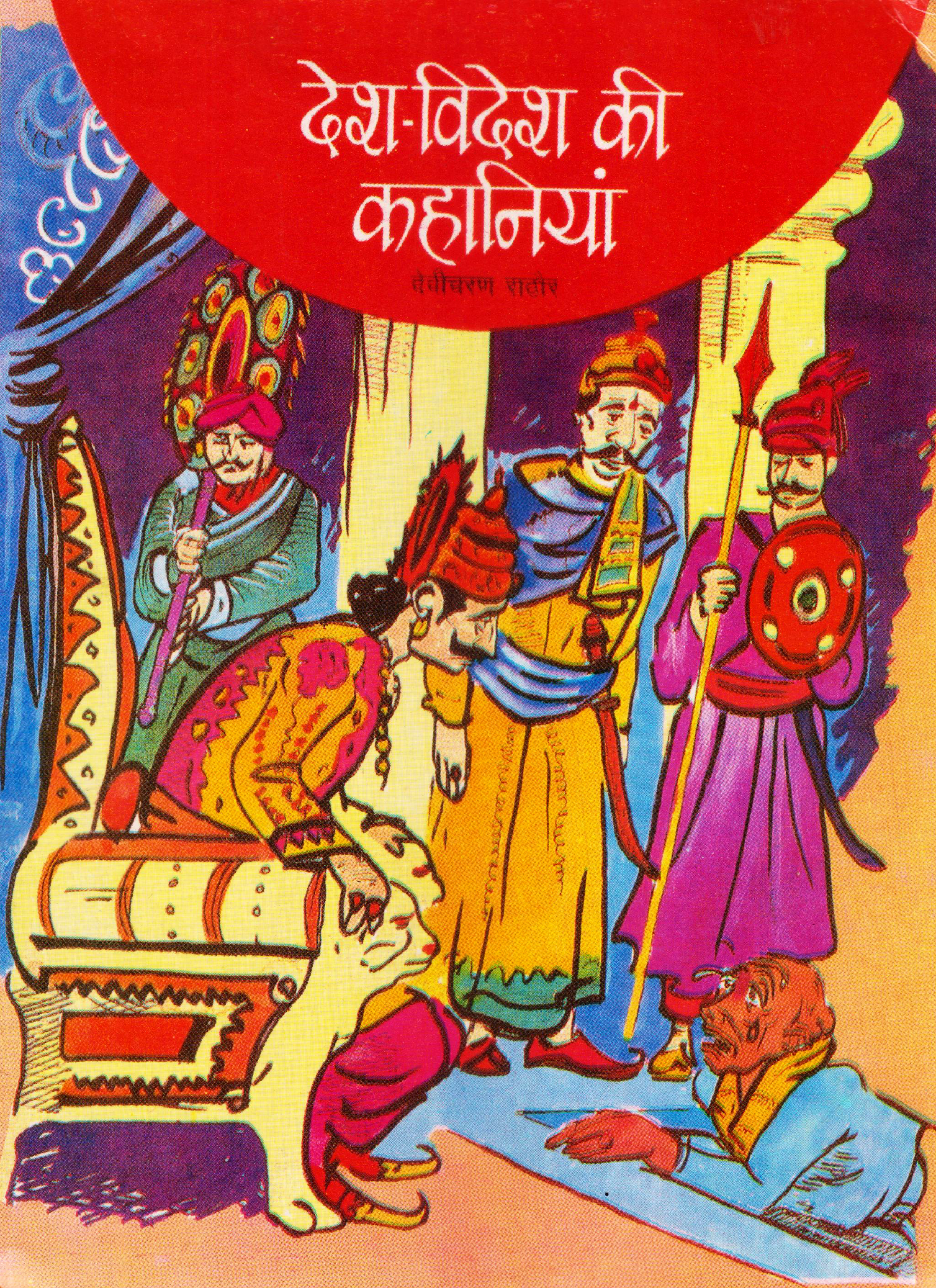
देश-विदेश की कहानियां

देवीचरण राठौर



देश-विदेश की कहानियां

देवीचरण राठौर

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

फाल्गुन 1918 · जनवरी 1997
द्वितीय संस्करण शक 1921 (2000)
तृतीय संस्करण : शक 1924 (2003)

ISBN : 81-230-0505-9

मूल्य : 50.00 रुपये

निदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001, द्वारा प्रकाशित

विक्रय केंन्द्र ● प्रकाशन विभाग

- पटियाला हाउस, तिलक मार्ग, नई दिल्ली-110001
- सुपर बाजार (दूसरी मंजिल), कनाट सर्कस, नई दिल्ली-110001
- प्रथम तल, सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्प्लेक्स, नई दिल्ली-110003
- कामर्स हाउस, करीम भाई रोड, बालार्ड पायर, मुंबई-400038
- 8, एस्प्लेनेड ईस्ट, कोलकाता-700069
- राजाजी भवन, बेसेंट नगर, चेन्नई-600090
- बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना-800004
- प्रेस रोड, तिरुअनंतपुरम-695001
- 27/6, राममोहन राय मार्ग, लखनऊ-226001
- प्रथम तल, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, बंगलौर-560034
- अंबिका काम्पलेक्स, प्रथम तल, पालदी, अहमदाबाद-380007
- नवजन रोड, उजान बाजार, गवाहाटी-781001
- ब्लाक नं. 4, प्रथम मंजिल, गृहकल्प काम्प्लेक्स, एम.जे. रोड, नामपल्ली, हैदराबाद-500001

विक्रय काउंटर ● पत्र सूचना कार्यालय

- 80, मालवीय नगर, भोपाल-462003
- सी.जी.ओ. काम्प्लेक्स, 'ए' विंग, ए.बी. रोड, इंदौर, (म.प्र.)
- बी-7बी, भवानी सिंह मार्ग, जयपुर-302001 (राजस्थान)

शिवम् ऑफसैट प्रेस, ए-12/1, नरायणा इंडिस्ट्रियल एरिया, नई दिल्ली 110 028 द्वारा मुद्रित।

अनुक्रम

देश

विदेश

सफलता का रहस्य

आनंदवर्धन व्यापारी के तीन बेटे थे। जब वे बड़े हुए तो एक दिन उन्हें अपने पास बुला कर वह बोला, ''तुम अब बड़े हो गए हो, तुम्हें अपने पैरों पर खड़ा होना चाहिए। अपना व्यापार बहुत छोटा है। मै तुम्हें व्यापार के लिए अलग से पैसे तो नहीं दे सकता पर एक रहस्य जरूर बता सकता हूं।''

तीनों बेटे अपने पिता की बात बड़े ध्यान से सुन रहे थे। तीनों ने एक साथ ही पूछ लिया, '' कैसा रहस्य, पिताजी?''

''अपने गांव के पास से बहने वाली नदी कुछ दूर आगे जा कर तीन अलग-अलग धाराओं में बहने लगती है। ये तीनों धाराएं आगे चल कर समुद्र में मिल जाती हैं। इनमें से प्रत्येक के मुहाने पर एक-एक द्वीप है। एक द्वीप हीरों से भरा पड़ा है, दूसरे पर बड़े ही उच्च कोटि के मोती बिखरे पड़े हैं और तीसरे पर कांच के टुकड़े हैं।''

''हीरों वाले द्वीप तक ले जाने वाली धारा कौन-सी है, पिताजी?'' बड़े लड़के ने उत्सुकता से पूछा।

''यह तो मुझे भी नहीं पता। पर तुम तीनों अलग-अलग रास्ते से जाओगे तो तीनों में से कोई तो वहां जरूर पहुंचेगा। अब तुम में से किसके भाग्य में हीरे का द्वीप लिखा है, यह तो भगवान ही जाने।'' व्यापारी बोला।

तीनों भाईयों ने शहर के एक महाजन से कर्ज लिया और किराये के जहाज ले कर अपना-अपना भाग्य आजमाने चल पड़े।

तीनों जहाज साथ-साथ सफर करते हुए उस जगह जा पहुंचे जहां से नदी तीन अलग-अलग धाराओं में बहना शुरू कर देती। तीनों ने अपना-अपना रास्ता चुना। आपस में गले मिले फिर अपनी राह चल पड़े।

तरह-तरह के संकटों का सामना करते हुए तीनों भाई बढ़ते जा रहे थे। एक माह बीत गया। एक दिन सबेरे-सबेरे बड़े भाई को द्वीप दिखाई दिया। बड़े उत्साह से उसने यह खबर अपने मल्लाहों को सुनाई। मल्लाह दोगुने जोश के साथ हाथ चलाने लगे। देखते-देखते उनका जहाज द्वीप के पास पहुंच गया।

सबेरे की धूप में चमचमाता हुआ द्वीप देख कर बड़ा भाई बहुत खुश हुआ। जल्द ही छोटी-छोटी नावों से वह अपने मल्लाहों के साथ द्वीप पर उतरा। लेकिन द्वीप पर पैर रखते ही उसकी आशा निराशा में बदल गई। वहां कांच के टुकड़े बिखरे पड़े थे।

'यह मेरा दुर्भाग्य है।' दुःख में डूबा बड़ा भाई बुदबुदाया। उसे अपने भाइयों से ईर्ष्या हुई। वह सोचने लगा कि दोनों भाई जरूर हीरे व मोती के द्वीपों पर पहुंचे होंगे। वह अपने भाग्य को कोसता हुआ लौट आया।

कठिनाइयों से लड़ता हुआ मंझला भाई हिम्मत के साथ आगे बढ़ता जा रहा था। दो माह बीत चुके थे। एक दिन उसे द्वीप के दर्शन हो ही गए। आननफानन में वह द्वीप तक पहुंच गया। पर द्वीप पर उतरते ही वह सिर पकड़कर बैठ गया। दूर से चमचमाते हुए दीखने वाले सारे टुकड़े कांच के ही थे।

'मेरे नसीब में कांच ही बंधा था। निश्चय ही दोनों भाई हीरे-मोती लाएंगे। कांच के इन टुकड़ों को ले



जाने से क्या लाभ?' ऐसा सोच कर वह भी खाली हाथ वापस चल पड़ा।

छोटे भाई ने जिस रास्ते को अपनाया था वह बाकी दोनों रास्तों से काफी कठिन था। पर छोटे ने हिम्मत नहीं हारी। वह आगे बढ़ता ही गया। तीन माह बीतने के बाद वह भी एक टापू तक पहुंचने में सफल हो गया। इस द्वीप पर भी कांच के टुकड़ों ने ही उसका स्वागत किया।

'धत् तेरे की! इतनी मेहनत और मिले कांच के टुकड़े।' छोटा भाई अपने भाग्य पर हंसा, 'दोनों भाई तो हीरे और मोती लेकर पहुंचेंगे। उनके मुकाबले में कांच के टुकड़ों की कीमत की क्या है?' ऐसा विचार उसके मन में आया। पर जल्दी ही निराशा को दूर भगा कर वह ठंडे दिमाग से सोचने लगा। कुछ देर तक सोचने के बाद उसने कुछ निश्चय किया और अपने मल्लाहों से कह कर जितना संभव हो सका उतने टुकड़े जहाज में लदवाए।

कांच के टुकड़ों से भरा हुआ जहाज लेकर वह लौटने के बजाए आगे बढ़ा। कुछ दिनों बाद एक बड़े शहर के बंदरगाह पर वह पहुंचा। वहां उसकी भेंट अन्य व्यापारियों से हुई। बातचीत के दौरान उसे पता चला कि समीप के एक राज्य में कांच बहुत ही कम मात्रा में पाया जाता है। बड़े उत्साह से वह उस राज्य की दिशा में चल पड़ा। वहां पहुंच कर उसने अपना सारा कांच बेच कर बहुत सारा धन इकट्ठा कर लिया।

लौटते समय वहां पर सस्ती मिलने वाली चीजें लदवा कर उन्हें बेचता हुआ वह वापस आया। अब वह काफी अमीर हो चुका था। एक साल बीत गया। बड़ा और मंझला घर पहुंच चुके थे। उनका लिया कर्ज पिता को चुकाना पड़ा। छोटे की प्रतीक्षा हो रही थी। एक दिन छोटे भाई का जहाज लौट आया। बंदरगाह पर जब बड़े-बड़े संदूक उतारे जाने लगे, तब व्यापारी समझ गया कि छोटा काफी धन कमा कर लौटा है। घर पहुंचने पर छोटे भाई ने बतलाया, ''दुर्भाग्य से मैं कांच के टुकड़ों वाले द्वीप पर पहुंच गया था।''

''अरे! हम भी तो कांच वाले द्वीप पर ही पहुंचे थे।'' बड़े व मंझले के मुंह से एक साथ निकल पड़ा।

''मुझे मालूम था,'' व्यापारी ने कहा, ''तीनों धाराएं एक ही द्वीप पहुंचती हैं पर हर धारा को वहां पहुंचने में अलग-अलग समय लगता है। इसलिए तुम तीनों वहां एक साथ नहीं पहुंच सके। तुम दोनों भाई यह सोच कर लौट आए कि दूसरे हीरे-मोती लाएंगे। परंतु छोटे ने अपने भाग्य को कोसने की बजाय कांच के टुकड़ों को हीरों में बदलने की सोची और बदल भी लिया। बुद्धि से कांच भी हीरा बन सकता है। सफलता का यही रहस्य है।''

अक्ल का करिश्मा

एक व्यापारी अपने गधे पर सामान लाद कर दूर-दराज इलाकों में जा कर बेचा करता। एक बार की बात है। वह हमेशा की तरह व्यापार करने के लिए निकला।

बहुत देर तक चलते रहने के बाद जब उसे थकावट महसूस हुई तो कुछ देर सुस्ताने के लिए वह एक जगह रुक गया। गधे को एक पेड़ से बांध कर वह सुस्ताने लगा। ठंडी हवा के झोंकों के कारण व्यापारी की आंख लग गई। कुछ देर बाद वह जाग गया। जागते ही उसने अपने गधे की ओर देखा पर गधा गायब हो चुका था। व्यापारी हतप्रभ रह गया।

वह घबराकर गधे को खोजने लग गया। खोजते-खोजते जब कुछ दूर वह पहुंचा तो उसे एक लड़का दिखाई दिया। व्यापारी झपट कर उस लड़के के पास पहुंचा और उसने लड़के से पूछा, ''ऐ लड़के, इस ओर कोई गधा आता दिखाई दिया क्या तुम्हें?''

''गधा, जो बायीं आंख से काना है?''

''हां....हां.... वही,'' व्यापारी ने अधीरता से कहा।

''और जो एक पैर से लंगड़ा भी है?''

''हां।''

''उसकी पीठ पर हरे रंग का बोरा लदा है?''

''बिल्कुल ठीक!'' व्यापारी खुश हो कर बोला।

''बोरे में नमक भरा है। है न?'' लड़के ने पूछा।

लड़के की बात सुनकर व्यापारी बहुत प्रसन्न हुआ। उसने लड़के से कहा, ''अच्छा तो वह गधा कहां है, यह बात दो। मैं तुम्हें इनाम दूंगा।''

''मुझे नहीं पता।'' लड़का बोला।

''पता नहीं?'' तुमने तो वह गधा देखा है न?''

''ऐसा मैने कब कहा?''

''ऐ! अब झूठ बोलते हो?'' व्यापारी गरजा।

''पर मैंने तो उस गधे को देखा ही नहीं।'' लड़के ने कहा।

''लगता है तुमने ही मेरा गधा चुरा कर कहीं छिपा दिया है। सीधी तरह गधा मुझे दे दो। नहीं तो बहुत बुरा होगा।'' व्यापारी ने धमकी दी।

''मैंने आपका गधा देखा ही नहीं, तो मै उसे चुरा कैसे सकता हूं?'' लड़का अपनी बात पर अड़ा रहा।

''तो तुम इस तरह से नहीं मानोगे। चलो मेरे साथ। पंचायत के सामने होगा इसका फैसला। कौन से गांव के रहने वाले हो तुम?''

लड़के ने अपने गांव का नाम बताया। व्यापारी उस लड़के को लेकर पंचायत के सामने हाजिर हुआ। पंचों



को सारी बातें बता कर अंत में वह बोला,'' आपके गांव के इस लड़के ने मेरा गधा चुराया है। मेरा गधा मुझे वापस दिला दीजिए। मैं आपका आभारी रहूंगा।''

''मैंने गधा नहीं चुराया है,'' लड़का दृढ़ता से बोला, ''मैंने तो इनका गधा देखा तक नहीं है।''

''फिर इतनी सारी बाते तुम कैसे जान गये?'' पंचों ने पूछा।

''मेरी आंखें सही सलामत जो हैं। मैं उधर से आ रहा था कि मैंने रास्ते में गधे के खुरों के निशान देखे। हर बार मुझे तीन निशान ही नजर आए, तो मैंने सोचा कि गधा एक पैर से लंगड़ा होगा।

''रास्ते के किनारे केवल दायीं ओर की घास नुची हुई दिखी, तो मैंने सोचा कि गधे की बायीं आंख गायब होगी।

''रास्ते में एक पेड़ से गधे ने अपनी पीठ रगड़ी होगी उस पेड़ की छाल पर बोरे का सूत चिपका हुआ था। उसका रंग हरा था। मैंने सोचा कि इस गधे की पीठ पर जरूर हरे रंग का बोरा लदा होगा।

''और रास्ते में कहीं-कहीं नमक पड़ा हुआ था, अतः बोरे में नमक भरा होने की बात मैंने कही।''

''शाबाश! बहुत होशियार हो तुम।'' पंचों ने लड़के की पीठ ठोंकी और खुश हो कर उसे इनाम भी दिया।

चतुर किसान

शंकर नामक एक किसान था वह बहुत ही मेहनती और चतुर था। बहुत सारे लोग अपनी समस्याओं का समाधान पाने के लिए उसके पास आया करते। सबकी मदद करना वह अपना परम कर्त्तव्य समझता, चारों ओर उसकी ख्याति फैली हुई थी। शंकर की चतुराइयों की कहानियां राजा तक पहुंची तो राजा के मन में शंकर की परीक्षा लेने का विचार आया।

एक दिन सवेरे-सवेरे राजा वेष बदलकर निकल पड़ा। राजा जब शंकर के घर पहुंचा तो उसे पता चला कि वह अपने खेत पर गया है। राजा ने अपना घोड़ा खेतों की ओर मोड़ा और पूछताछ करता हुआ शंकर के खेत पर जा पहुंचा। वेष बदला होने के कारण अब तक उसे कोई भी नहीं पहचान पाया था।

राजा शंकर के पास पहुंचा तो शंकर ने क्षणभर राजा के ओर देखा और हाथ जोड़कर बोला, ''प्रणाम! महाराज।''

राजा भौंचक्का रह गया। शंकर ने उसे क्षण भर में ही कैसे पहचान लिया। इस आश्चर्य में डूबा हुआ राजा कुछ देर तक कुछ भी नहीं बोल पाया।

शंकर बोला, ''क्या आज्ञा है, अन्नदाता?''

''पहले यह बताओ कि तुमने मुझे कैसे पहचान लिया?'' राजा ने पूछा।

''राजमुद्रा देखकर, महाराज,'' शंकर नम्रता से बोला।

राजा ने वेष जरूर बदला था पर वह राजमुद्रा उतारकर रखना भूल गया था। राजा ने चौंक कर राजमुद्रा की ओर देखा और मुस्करा दिया।

कुछ क्षणों बाद राजा ने पूछा, ''प्रतिदिन कितना कमा लेते हो तुम?''

''यही कोई चार पैसे, महाराज।''

''क्या करते हो तुम इन पैसों का?''

''एक पैसा भोजन पर खर्च करता हूं। एक उधार देता हूं। तीसरे पैसे से कर्ज चुकाता हूं और चौथा कुंए में फेंक देता हूं।''

''इस पहेली का क्या मतलब?'' राजा ने आश्चर्य से पूछा

''महाराज, पहला पैसा अपना तथा अपनी पत्नी के पोषण के लिए खर्च करता हूं। दूसरा पैसा बच्चों के पोषण पर खर्च करता हूं। यह एक तरह से उधार देना ही है। जब मैं बूढ़ा हो जाऊंगा तब मेरे बच्चे मेरा पोषण कर मेरा उधार दिया हुआ पैसा चुका देंगे। तीसरा पैसा मैं अपने माता-पिता पर खर्च कर उनका कर्ज अदा करता हूं तथा चौथा पैसा किसी भी फल की आशा न रखते हुए दान कर देता हूं।'' शंकर बोला।



शंकर के उत्तर से राजा बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने शंकर से कहा, ''देखो शंकर, एक वादा करो कि जब तक एक हजार बार मेरा चेहरा नहीं देख लोगे तब तक यह बात किसी और को नहीं बताओगे। मैं दरबार में सबसे चार पैसों के खर्च की पहेली का उत्तर पूछूंगा। यदि एक माह तक कोई उत्तर नहीं दे पाया तो मैं तुम्हें ढ़ेर सारा इनाम दूंगा।''

दूसरे दिन भरे दरबार में राजा ने कहा, ''हमारे राज्य में एक ऐसा किसान रहता है जो रोजना चार पैसे कमाता है। एक पैसा वह खुद पर खर्च करता है, दूसरा उधार देता है, तीसरे से कर्ज चुकाता है तथा चौथा कुंए में फेंक देता है। क्या कोई इसका मतलब बता सकता है?''

सारे दरबार में चुप्पी छा गई। कुछ देर बाद मंत्री ने इसका उत्तर देने के लिए एक सप्ताह का समय मांगा।

मंत्री इस पहेली को सुलझाने के लिए सोचने लगा। तब अनायास ही उसे शंकर का ख्याल आया। शंकर के पास पहुंचकर उसने शंकर से इस पहेली का हल पूछा तो शंकर नम्रता से बोला, ''क्षमा कीजिए, मैंने महाराज से वादा किया है कि जब तक मैं एक हजार बार उनका चेहरा नहीं देख लूंगा तब तक इसका उत्तर किसी को नहीं बताऊंगा।''

शंकर के बात सुनकर मंत्री निराश हो गया। कुछ देर बाद उसने शंकर से इस समस्या का हल ढूंढ़ने के लिए कहा तो शंकर ने मुस्कराते हुए इस समस्या का हल भी बता दिया।

मंत्री बड़ी ही खुश हुआ। शंकर की युक्तिनुसार मंत्री ने सारा इंतजाम किया और शंकर ने पहेली का हल मंत्री को बता दिया।

एक सप्ताह बीत गया।

मंत्री ने भरे दरबार में पैसों के खर्च की पहेली सुलझा दी। सभी ने मुक्त कंठ से मंत्री की प्रशंसा की।

राजा ने सोचा कि शंकर ने ही यह उत्तर मंत्री को बतलाया होगा। राजा को बड़ा गुस्सा आया। उसने शंकर को पकड़कर लाने की आज्ञा दी।

सैनिक शंकर को पकड़ लाए। अपनी पीठ पर एक बोरा लादे शंकर दरबार में हाजिर हुआ। दरबार में पहुंच कर उसने राजा को प्रणाम किया।

''धोखेबाज! तुमने वादा तोड़ा है। इसकी सजा जानते हो?'' राजा गरजा।

''पर महाराज, मैंने वादा नहीं तोड़ा।'' शंकर नम्रता से बोला।

''तुम झूठ बोलते हो।'' राजा का गुस्सा सातवें आसमान पर पहुंच गया।

''नहीं महाराज, सच कहता हूं मैंने वादा नहीं तोड़ा। मंत्री जी को उत्तर बताने से पूर्व मैंने आपका चेहरा हजार बार देखा था।'' यह कहते हुए शंकर ने राजा को अपने साथ लाए बोरे का मुंह खोलकर उसमें रखीं हजार स्वर्ण मुद्राएं दिखा दीं जिन पर राजा का चेहरा अंकित था।

राजा शंकर की चतुराई पर मुग्ध हो गया और उसने शंकर को दस गांव इनाम में दे दिए।

सौ सुनार की

लाला कस्तूरचंद की परचून की दुकान थी। साथ ही वे चीजें गिरवी रखकर कभी-कभार ब्याज पर पैसे उधार दिया करते। बड़े ही जिंदादिल एवं हंसमुख थे लालाजी। साथ ही व्यवहार कुशल होने के कारण उन्हें झांसा देना कोई आसान काम नहीं था। उनकी चतुराई के कई किस्से मशहूर थे।

उसी गांव में एक सुनार था, रामलाल। बड़ा काइंयां था। सोने-चांदी के व्यापार में उसने काफी धन कमाया था। खुद को वह बड़ा चतुर समझता था। कोई जब उसके सामने लालाजी की चतुराई की बात करता तो उसे चिढ़ होती।

एक बार गांव के मुखिया अपने दोस्तों के साथ उसके घर पधारे। गपशप के दौरान किसी ने लालाजी की चतुराई की प्रशंसा की तो रामलाल तुनक कर बोला, ''हुंह! इस परचूनिए को लोग न जाने इतना होशियार क्यों समझते हैं? मैं चाहूं तो इसे ऐसा सबक सिखा सकता हूं जो वह जिंदगी भर याद रखेगा।''

और बातों ही बातों में मुखिया से शर्त बंध गई। जो भी हारेगा, उसे जीतने वाले को सौ रुपए और साथ में दावत देना तय हुआ।

रामलाल ने दो दिन का समय मांग लिया। इन दो दिनों में उसने पीतल की एक छोटी-सी मूर्ति बनाई। मूर्ति पुरानी लगे इसलिए उसने मूर्ति का कुछ हिस्सा घिस डाला तथा किसी रसायन का उपयोग कर थोड़ा हिस्सा काला कर डाला।

तीसरे दिन मुखिया को साथ लेकर वह कस्तूरचंद की दुकान पर गया। कुछ देर इधर-उधर की बातें कर रामलाल गंभीर स्वर में बोला, ''लालाजी, एक अजीब संकट में फंस गया हूं। कोई रास्ता नहीं सूझा तो आपके पास चला आया।''

''कहिए, मैं क्या सेवा कर सकता हूं आपकी?'' लालाजी ने कहा।

''बात यह है कि मुझे तुरंत ही एक हजार रुपए की आवश्यकता है। यदि आप मुझे उधार दे सकें तो बड़ी कृपा होगी .... मैं जल्दी ही ब्याज समेत लौटा दूंगा।'' रामलाल बड़ी नम्रता से बोला।

उत्तर में कस्तूरचंद कुछ भी नहीं बोले तो रामलाल ने कहा, ''समझ गया। आपकी शर्तों के मुताबिक मुझे कोई चीज रेहन रखनी होगी। है न?''

और उसने पीतल की वह मूर्ति लालाजी के सामने रख दी।

''यह क्या?'' लाला जी पीतल की मूर्ति देख विस्मय से बोले।

''लालाजी, यह कोई मामूली मूर्ति नहीं है। लगभग चार सौ वर्ष पूर्व बनी है यह। इस ऐतिहासिक मूर्ति की कीमत कम से कम पंद्रह-बीस हजार तो जरूर होगी। मजबूरी के कारण मैं इसे रेहन के रूप में रखने के लिए विवश हूं।'' रामलाल नाटकीयता से बोला।

लालाजी ने क्षणभर विचार किया और उस मूर्ति को लेकर एक हजार रुपए रामलाल को थमा दिए।

रामलाल को अपनी खुशी छिपानी दूभर हो गई। लालाजी को बार-बार धन्यवाद दे कर वह मुखिया के



साथ लौटा। लालाजी की दुकान से कुछ दूर जाते ही वह हंसकर बोला, ''देख लिया मुखिया जी, मेरी बुद्धि का चमत्मकार! लाला को जब मूर्ति की असली कीमत का पता चलेगा तो रोता-कलपता रहा जाएगा बेचारा। दो कौड़ी की मूर्ति के लिए हजार रुपए देने वाले को भला चतुर कैसे मान लिया जाए?''

मुखिया ने अपनी हार मान ली और शर्त के मुताबिक सौ रुपए रामलाल को दिए, साथ में दावत भी।

एक माह बीत गया। लोगों ने देखा कि लालाजी कुछ उदास से दीखने लगे हैं। जब लगातार तीन दिन तक उनकी दुकान बंद रही तो लोगों को आश्चर्य हुआ। कुछ लोगों ने उनसे मिलकर कारण जानना चाहा तो लालाजी ने टाल दिया। लालाजी की परेशानी का कारण जानने के लिए सभी उत्सुक थे पर किसी को कुछ पता नहीं चला।

हजार रुपए हाथ से निकल जाने का गम लालाजी को खाए जा रहा है, ऐसा रामलाल को लगता था। लालाजी को परेशान देख उसे और भी खुशी हो रही थी। मूर्ति के बारे में लालाजी क्या सोचते हैं, यह जानने के लिए वह बहुत उत्त्सुक था। उसे याद आया कि लालाजी के घर चौका-बर्तन करने वाली महरी उसके यहां भी तो काम करती है। उसने लालाजी के घर की पूरी खबर लाने का काम महरी को सौंपा। इनाम के लालच में महरी ने यह काम सहर्ष स्वीकारा।

एक दिन लालाजी अपनी धर्मपत्नी से बोले, ''अजीब संकट में फंस गया हूं। क्या करूं, कुछ समझ में नहीं आता।''

''क्यों? क्या हुआ?'' पत्नी ने चिंतित स्वर में पूछा।

''रामलालाजी ने जो मूर्ति मेरे पास रेहन रखी थी, वह गुम हो गई है। बड़ी ही मूल्यवान मूर्ति थी।''

''हाय राम! अब क्या होगा?'' पत्नी घबड़ाकर बोली।

''होगा क्या? अब ज़ब भी रामलाल जी अपनी मूर्ति वापस लेने आएंगे तो उन्हें मूर्ति का पूरा मूल्य देना होगा। भारी रकम अदा करनी पड़ जाएगी।'' लालाजी दुःखी स्वर में बोले।

सारी बातें महरी सुन रही थी। वह समझ गई कि रामलाल के लिए ये बड़ी ही महत्वपूर्ण सूचना है। उसने किसी तरह अपना काम निपटाया और दौड़ी-दौड़ी रामलाल के घर गई।

मूर्ति गुम होने की खबर पाकर रामलाल बेहद प्रसन्न हुआ। उसने तिजोरी खोलकर कुछ पैसे साथ में लिए और मुखिया के साथ लालाजी के यहां गया। लालाजी ने बुझे मन से उनका स्वागत किया।

''लालाजी, मैं आपके पैसे लौटाने आया हूं। कृपया कितना ब्याज हुआ है यह बता दें।'' रामलाल ने पूछा।

''बीस रुपए ब्याज हुआ है।'' यह कहने के लिए भी लालाजी को काफी समय लगा।

रामलाल ने झट एक हजार बीस रुपए लालाजी के सामने रखे और बोला, ''आपको किन शब्दों में धन्यवाद दूं यह समझ में नहीं आ रहा। सचमुच आपने आड़े वक्त रुपए देकर मुझे संकट से उबारा......''

लालाजी न कुछ बोले और न ही उन्होंने उन पैसों को हाथ लगाया।

''पैसे गिन लीजिए और मेरी मूर्ति लौटा दीजिए।'' रामलाल ने उतावलेपन से कहा।

लालाजी ने पैसे लिए और बोले, ''गिनना कैसा? आप कम थोड़े ही देंगे।''

रामलाल हंसकर बोला, ''अब मेरी मूर्ति लौटा दीजिए।''

''बात यह है कि...... '' लाला जी कुछ अटक गए। उनके चेहरे पर हवाइयां उड़ती देख रामलाल को मजा आ रहा था।

जानबूझ कर वह बोला, ''वास्तव में मुझे इससे ज्यादा पैसे ब्याज के रूप में देने चाहिए। लीजिए मैं और पांच सौ रुपए देता हूं।''

उसने लालाजी के हाथ में जबरन और पांच सौ रुपए थमा दिए। रुपए हाथ में ले कर लालाजी ने सकुचाते हुए कहा,

''लेकिन......''

''लेकिन-वेकिन कुछ नहीं। आपने मुझे घोर संकट से बचाया है। यह उसका मूल्य नहीं, मेरी सद्‌भावना समझिए।'' रामलाल अपनी खुशी छिपाता हुआ बोला।

लालाजी ने सारे पैसे ठीक ढंग से रख लिए और अंदर से वह मूर्ति लाकर रामलाल के आगे रख दी।

रामलाल मूर्खों की तरह आंखे फाड़े मूर्ति की ओर देखता रहा!

और गंगाराम सच बोला

गंगाराम को अपनी पुत्री के विवाह के लिए पांच सौ रुपये चाहिए थे। उसने न जाने कितने लोगों के आगे हाथ फैलाया, मिन्नतें की पर किसी ने उसे कानी कौड़ी भी नहीं दी। सभी को अच्छी तरह पता था कि यह आदमी झूठा तथा बेईमान है।

निराश हो कर वह घर लौटा और आंगन में बिछी खटिया पर सर पकड़ कर बैठ गया। वहां से गुजरते हुए पंडित दयाराम ने उसे देखा। उसका उदास चेहरा देखकर पंडित जी ने सहानुभूति से पूछा, ''क्यों भई गंगाराम, क्या बात है? बड़े परेशान दीख रहे हो।''

पंडित जी के शब्द सुनकर वह फूट-फूटकर रो पड़ा। रोते-रोते उसने सारी रामकहानी सुनाई।

पंडित जी अपने नाम के अनुरूप ही बड़े दयालु थे। गंगाराम की कहानी सुनकर उनका हृदय पिघल गया। पर उसकी मदद करना खुद को फंसाना है, यह भी वे अच्छी तरह जानते थे। गंगाराम को उसके हाल पर छोड़ कर वे लौट आए।

पंडित जी घर पहुंचे। बार-बार उनकी आंखों के सामने गंगाराम का उदास चेहरा घूम जाता। उन्हें लग रहा था कि गंगाराम की आंखों से जो आंसू बहे, वे जरूर पश्चाताप के आंसू हैं। इनमें उसकी सारी बुराई बह गई होगी, ऐसा उन्होंने सोचा।

पंडित जी ने गंगाराम के मदद करने का निश्चय किया। पांच सौ रुपये लेकर वह खुद गंगाराम के घर गए।

फिर से पंडित जी को देख कर गंगाराम को आश्चर्य हुआ। उसके कुछ पूछने के पूर्व ही पंडित जी बोले, ''मैं तुम्हें उधार देने के लिए तैयार हूं पर तुम्हें ये रुपये यथाशीघ्र लौटाने होंगे।''

गंगाराम को अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ। कोई उसे रुपया उधार देगा, यह उसने सपने में भी नहीं सोचा था। वह झट से बोला, ''पंडित जी, आप तो देवता हैं देवता..... मैं आपका यह उपकार जीवन भर नहीं भूलूंगा।''

''देखो भई, मैं तुमपर विश्वास करके पैसे उधार दे रहा हूं, कहीं धोखा मत देना।'' पंडित जी ने कहा।

''नहीं पंडित जी, मैं कृतघ्न नहीं हूं, मैं अवश्य ही आप के पैसे लौटा दूंगा। भगवान की सौगंध!'' गंगाराम ने विश्वास दिलाया।

पंडित जी को किसी के काम आने का बड़ा सुख मिला।

गंगाराम की पुत्री का विवाह संपन्न हो गया। दो माह बीते, चार बीते, छः हो गए पर गंगाराम ने पैसे नहीं लौटाए।

एक दिन पंडित जी ने उससे कहा, '' भई गंगाराम, बहुत दिन हो गए। अब तो मेरे पैसे लौटा दो।''

''पैसे? कैसे पैसे?'' गंगाराम मक्कारी से बोला।



पंडित जी हतप्रभ रह गए। कुछ क्षणों बाद उन्होंने कहा, "छः माह पूर्व तुम्हारे घर आकर मैंने खुद पांच सौ रुपये दिए थे। तुम्हें याद नहीं?"

"क्या मैंने आपसे पैसे मांगे थे?" गंगाराम ने पूछा।

"तुमने तो नहीं मांगे थे पर तुम्हारी ज़रूरत देखकर मैंने खुद ही तुम्हें पैसे उधार दिए थे।" पंडित जी बोले।

"क्यों झूठ बोल रहे हो, पंडित? भला बिना मांगे ही किसी के घर जाकर भी कोई रुपया उधार देता है? कौन विश्वास करेगा आपकी बातों का?" गंगाराम बेईमानी पर उतर आया था।

"पर मैंने तो खुद अपने हाथों से पैसे दिये हैं तुम्हें......."

"पंडित, किसी और से यदि तुम ये बात कहोगे तो लोग हंसेंगे तुमपर।" गंगाराम व्यंग्य भरे स्वर में बोला।

पंडित जी परेशान हो गए। उनके पास कोई सबूत भी तो नहीं था।

एक दिन मुखिया को उन्होंने सारी बात बता दी। कुछ देर तक सोच कर मुखिया ने पंडित जी के कान में कुछ कहा।

दूसरे दिन पंडित जी ने पंचायत से फरियाद की। सभा बुलाई गयी। गंगाराम को बुलवाया गया। वह निश्चिंत था। उसे अच्छी तरह पता था कि पंडित जी के पास कोई सबूत है ही नहीं।

मुखिया ने पहले ही कह दिया कि वे जिससे प्रश्न पूछेंगे, केवल वही उत्तर देगा। दूसरा बीच में नहीं बोलेगा।

मुखिया ने पंडित जी से पूछा, "हां तो पंडित जी, आप गंगाराम के घर दिन में गए थे या रात में?"

"जी, रात में।" पंडित जी बोले।

गंगाराम चौंका। पंडित जी तो दिन में उसके घर आए थे पर उन्होंने रात में आने की बात कही थी।

"जब आप गंगाराम के घर पहुंचे तो वहां क्या देखा आपने?" मुखिया ने प्रश्न किया।

"यह चूल्हे के पास बैठा रोटियां सेंक रहा था और इसकी पत्नी खटिया पर बैठे इसे गालियां दे रही थी।" पंडित जी बोले।

"क्या बक रहे हो पंडित? कहीं तुम्हारा दिमाग तो ख़राब नहीं हो गया?" गंगाराम क्रोध से उबल पड़ा।

"तुम चुप रहो। जब तुम्हारी बारी आएगी तब तुम बोलना।" मुखिया ने गंगाराम को डांट लगायी।

कुछ क्षण बीतने पर मुखिया ने अगला प्रश्न किया, "फिर क्या हुआ?"

"मैंने गंगाराम से कहा कि उसने मुझसे जो हजार रुपये उधार लिए हैं, वह लौटा दे।"

"हजार रुपये, अरे झूठे, तुमने तो केवल पांच सौ रुपये ही दिए थे।" गंगाराम जीवन में पहली बार सच बोल गया!

चार दिनों के भीतर ही पंडित जी के पांच सौ रुपये लौटाने का हुक्म उसे दे दिया गया। साथ ही पंचों ने खूब डांटा-फटकारा।

पिता का प्यार

लक्ष्मीनंदन का नाम शहर के सफलतम व्यापारियों में गिना जाता था। अपन लगन तथा मेहनत से उन्होंने अपार संपत्ति अर्जित की थी। अच्छे कार्यों के लिए दान देने में भी वह सदा आगे रहते। उनके इकलौते पुत्र का नाम था केशव। मातृविहीन केशव को उन्होंने बहुत ही लाड़-प्यार से पाला था। बड़ा होकर केशव एक श्रेष्ठ व्यापारी तथा अच्छे इन्सान के रूप में जाना जाए, ऐसी उनकी इच्छा थी।

परंतु दुर्भाग्य से केशव बचपन से ही बुरी संगत में पड़ गया था। दिन भर आवारागर्दी करते हुए अपने मित्रों के साथ घूमना उसे बड़ा अच्छा लगता। पिता ने उसे समझाने की लाख कोशिश की पर कोई फायदा नहीं हुआ।

समय बीतता गया। लक्ष्मीनंदन अब बूढ़े हो चले थे, केशव की चिंता करते रहने के कारण वे बीमार से हो गए।

कुछ दिनों पश्चात जब लक्ष्मीनंदन को महसूस हुआ कि अब उनकी मृत्यु निकट ही है, तो उन्होंने केशव को बुलवाया। नशे में धुत्त केशव उनकी शैय्या के निकट आया। बेटे को इस रूप में देखकर लक्ष्मीनंदन का हृदय रो उठा, पर संयम से काम लेते हुए उन्होंने केशव को बैठने को इशारा किया, केशव कुछ पल सोचता रहा फिर धम्म से उनके निकट ही बैठ गया।

''बेटे, अब मैं कुछ ही दिनों का मेहमान रह गया हूं।'' लक्ष्मीनंदन थरथराती हुई आवाज में बोले।

केशव चुप रहा।

''तुम जिन्हें मित्र समझते हो, वे लोग तुम्हारे सच्चे मित्र नहीं है।''

केशव उपेक्षा से हंसा।

''आज तुम मेरी बात पर हंस रहे हो, पर कुछ ही दिनों में तुम्हें इस बात का पता चल जाएगा।''

''पिताजी, आप मेरे मित्रों को नहीं जानते। ये लोग मेरे लिए अपनी जान तक दे सकते हैं।'' केशव अकड़कर बोला।

''यह तुम्हारा भ्रम है....आज तुम्हारे पास संपत्ति है, पर अपनी बुरी आदतों के कारण जब तुम अपनी सारी संपत्ति गंवा बैठोगे तब कोई भी तुम्हारा साथ नहीं देगा।''

''तब का तब देखा जाएगा,'' केशव उठता हुआ बोला, ''मैं चलता हूं। मेरे मित्र मेरा इन्तजार कर रहे होंगे।''

''ठहरो बेटे, एक और बात तुमसे कहनी है,'' लक्ष्मीनंदन बोले, ''मैंने हरदम तुम्हारी भलाई के बारे में ही सोचा है। लेकिन यदि दुर्भाग्य से भविष्य में तुम कंगाल हो जाओगे तो सारे मित्र तुमसे दूर भागेंगे। ऐसी स्थिति में तुम्हारे मन में आत्महत्या के विचार आएं तो एक बात याद रखना। तुम्हें आत्महत्या करनी ही पड़े तो राममंदिर के पिछवाड़े जो पुराना कुआं है उसमें कूद जाना। कूदने से पहले कुएं के समीपवाले पीपल के वृक्ष के नीचे जो काला पत्थर पड़ा है, उसे गले में बांध लेना।''



"बहुत अच्छा! अब अगर आपका उपदेश समाप्त हो गया हो तो कृपा करके मुझे जाने दें।" केशव गुस्से से बोला।

लक्ष्मीनंदन मौन रहे। केशव उठकर चल दिया।

कुछ ही दिनों बाद लक्ष्मीनंदन स्वर्ग सिधारे। अब तो केशव को कोई रोकने-टोकने वाला भी नहीं रहा। केशव खुले हाथों से रुपया खर्च करता गया। मित्र भी उसे बढ़ावा देते। बहुन जल्द ही सारी सम्पत्ति समाप्त हो गई। केशव पूर्ण रूप से कंगाल हो गया। सारे मित्र उसका साथ छोड़कर चले गए। मित्रों के प्रति उसका हृदय घृणा से भर गया। पर अब क्या किया जा सकता था?

रह-रह कर उसे अपने पिता की बातें याद आतीं और वह रो पड़ता। केशव निराश हो गया। आत्महत्या के विचार उसके मन में आने लगे।

कहीं से कोई मदद न मिलती देख उसने आत्महत्या करने का निश्चय किया। अंतिम समय में पिता द्वारा बताई गई सारी बातें उसे याद आईं। सारी बातें उसे बेकार सी लगीं फिर भी उसने उन पर अमल करने की सोची। उसके पैर उसे अपने-आप राममंदिर वाले कुएं तक ले आए। कुएं में कूदने से पहले उसने आस-पास नजर दौड़ाई। समीप ही उसे एक पीपल का पेड़ नजर आया। पीपल के नीचे एक पत्थर पड़ा हुआ था। केशव पेड़ के निकट गया। उसने पत्थर उठाने की कोशिश की, पर वह पत्थर नहीं उठा पाया। पत्थर जमीन में गड़ा हुआ था। कुछ देर की खोज-बीन के बाद उसने एक नुकीला पत्थर ढूंढ़ निकाला। इस पत्थर की सहायता से वह गड़े हुए पत्थर के आस-पास की जमीन खोदता गया।

आधे घंटे के मेहनत के बाद गड़ा हुआ पत्थर कुछ-कुछ हिलने लगा। कुछ देर और खोदने के बाद केशव ने सारी ताकत लगाकर वह पत्थर उखाड़ दिया।

पत्थर उखड़कर हाथ में आते ही वह हतप्रभ रहा गया! पत्थर के ठीक नीचे एक लोहे का बक्सा पड़ा हुआ था। केशव ने झट से वह बक्सा निकाला और उसे खोलने की कोशिश करने लगा। कुछ ही देर की मेहनत के बाद बक्सा खुल गया। बक्से में सोने की कुछ सिल्लियां तथा कुछ बहुमूल्य हीरे रखे हुए थे। साथ में एक चिट्ठी भी रखी हुई थी। केशव ने अधीर हो कर चिट्ठी खोली। लक्ष्मीनंदन के हाथों में लिखी गई उस चिट्ठी को पढ़कर केशव के आंखें भीग गईं। चिट्ठी में लिखा था-

"प्यारे बेटे, इस धन का सदुपयोग करके सुखी रहो।"

केशव को एक नया जीवन मिल गया। बक्से में मिले धन का उपयोग करके उसने व्यापार शुरू किया और जी तोड़ मेहनत करके अपने पिता का सपना पूरा किया।

बोओगे सो काटोगे

राजा रामदेव राय उदार, दयालु तथा कर्त्तव्यदक्ष शासक थे। साथ ही वह कला तथा साहित्य के मर्मज्ञ एवं रसिक के रूप में भी विख्यात थे। कलाकारों तथा साहित्यकारों को उनके राज्य में उदार आश्रय मिला हुआ था।

रामदेव राय के दरबार में चंद्रगुप्त नामक राजकवि थे। उनकी कविताएं सुनने में राजा को अनोखा आनंद प्राप्त होता था। राजा नियमित रूप से उनकी कविताएं सुनते। प्रतिदिन सवेरे राजा रामदेव राय चंद्रगुप्त की कविता सुनते और उसके बाद ही दरबार के काम-काज का प्रारंभ होता।

कविवर चंद्रगुप्त को मानो मां सरस्वती का वरदान ही मिला हुआ था। बूढ़े होने के बावजूद उनकी प्रतिभा में कहीं कोई कमी नहीं आयी थी। उनकी कविताओं की सरसता जरा भी कम नहीं हुई थी।

कविराज की कविताएं सुनने के पश्चात राजा उन्हें पुरस्कार स्वरूप पांच सोने की मोहरें दिया करते।

राजा का निजी सेवक शंभू बड़ा ही लालची इंसान था। वह सोचा करता कि वह बूढ़ा कुछ कविताएं सुनाकर रोजाना सोने की पांच मोहरें ऐंठता है...और महीने भर की कड़ी मेहनत के बाद मुझे मिलती हैं कुल दस मोहरें! मन ही मन वह कविराज से ईर्ष्या करने लगा था।

रात-दिन वह चंद्रगुप्त के नाश का उपाय सोचा करता, काफी सोच-विचार के बाद उसने एक योजना बनायी।

एक शाम शंभू कविराज के घर पहुंचा। कविराज ने उसका यथायोग्य स्वागत कर पूछा, ''कहो शंभू, कैसे आना हुआ?''

''बात यह है कि...''

चंद्रगुप्त उसकी ओर उत्सुकता से देखने लगे।

''परसों ही की बात है, महाराज मुझसे कह रहे थे....''

''कहो, रुक क्यों गये?'' चंद्रगुप्त ने कहा।

''जाने दीजिए, आप व्यर्थ में परेशान होंगे।'' शंभू बोला। उसकी अधूरी बात सुनकर चंद्रगुप्त व्यग्र हो उठे। वे बोले, ''क्या कह रहे थे महाराज? साफ-साफ बताते क्यों नहीं?''

''अब आप आग्रह करते हैं तो बता ही देता हूं। महाराज कह रहे थे कि सुबह-सवेरे कविराज को देखकर मन उदास हो जाता है। उनके सफेद बालों में मुझे अपना बुढ़ापा दिखाई देता है। उनकी कविताएं सुनने की जरा भी इच्छा नहीं होती पर क्या किया जाए?''

शंभू के मुंह से यह बात सुनकर कविराज स्तब्ध रह गए। बड़ा दुख हुआ उन्हें। चंद्रगुप्त एक सरलहृदय, निष्कपट इंसान थे। व्यथित होकर बोले, ''बुढ़ापे पर किसी का वश भी तो नहीं चलता। मैं कर भी क्या सकता हूं?''

''आप एक काम जरूर कर सकते हैं। आप जब सवेरे कविताएं सुनाने महाराज के सम्मुख उपस्थित हों तब पगड़ी बांधकर जाएं जिससे आपके सफेद बाल छिपे जाएंगे।'' शंभू ने उपाय बताया।



शंभू द्वारा बताया गया उपाय सुनकर कविराज प्रसन्न हो गए। उन्होंने शंभू को अच्छा-खासा इनाम देकर विदा किया।

शंभू अपनी खुशी छिपाता हुआ राजमहल पहुंचा। मौका देखकर वह फुसफुसाते स्वर में महाराज से बोला, ''महाराज...''

''क्या है?''

''अभी कुछ देर पहले कविराज से भेंट हुई थी।''

''फिर?''

''वे आपके बारे में कुछ कह रहे थे।''

''क्या कहा उन्होंने?''

''उन्होंने कहा कि प्रतिदिन आपको कविताएं सुनाकर वे तंग आ चुके हैं।''

''खामोश! क्या बकते हो?'' राजा बिफर पड़े।

''नहीं महाराज, मैं झूठ नहीं बोल रहा हूं... भगवान की सौगंध...'' शंभू बोला।

''और क्या कहा उन्होंने?'' राजा ने कठोर स्वर में पूछा।

''वह बोले कि जब आपके सामने कविताएं सुनाने बैठते हैं तो उनके सिर में दर्द होने लगता है। इसी कारण वह कल से पगड़ी बांधकर आने वाले हैं।'' शंभू जल्दी-जल्दी बोल गया।

''हूं,'' महाराज ने गुस्से में हुंकार भरी।

दूसरे दिन सवेरे चंद्रगुप्त राजमहल पधारे। उनका बदला हुआ रूप देखकर सभी को आश्चर्य हुआ। कविराज सिर पर पगड़ी धारण किये हुए थे। जैसे ही वे राजा के सम्मुख उपस्थित हुए तो उन्हें देखकर राजा बड़े क्रोधित हो गए....पर अपने आपको संयत करके उन्होंने कविराज की कविताएं सुनीं।

काव्यपाठ समाप्त होने पर महाराज बोले, ''कविराज, हम आपकी कविताएं सुनकर बड़े प्रसन्न हुए। आज हम आपको कोई बड़ा पुरस्कार देने की सोच रहे हैं।''

''बड़ी कृपा है आपकी।''

राजा ने तुरंत एक पत्र लिखा और उस पत्र को बंद करवाकर कविराज को सौंपते हुए बोले, ''आप यह पत्र मंत्री जी को दिखलाएं, वे आपको इनाम देंगे,''

महाराज को धन्यवाद देकर चंद्रगुप्त निकल पड़े।

यह सब देखकर शंभू आश्चर्य में डूब गया।

उसका दिमाग फौरन नयी जुगत भिड़ाने में लग गया। क्षणभर में ही उसने कुछ निश्चय किया। कुछ ही क्षणों में ही वह कविराज के पास पहुंचा। उसे देखकर चंद्रगुप्त प्रसन्नता से बोले, ''सचमुच तुम एक बहुत अच्छे इंसान हो। तुम्हारी तरकीब से महाराज बड़े प्रसन्न हुए।''

''और इनाम मिल रहा है आपको! आपने अब तक महाराज से बहुत कुछ पाया है। मुझे भी तो कुछ मिलना चाहिए। यदि आप मुझे यह पत्र दे दें तो बड़ी कृपा होगी आपकी।'' शंभू दीनता से बोला,

कविराज लालच से कोसों दूर थे, उन्होंने तुरंत ही वह पत्र शंभू को थमा दिया और बोले, ''वाकई! यह इनाम पाने के सच्चे हकदार तो तुम ही हो।''

पत्र हाथ में आते ही शंभू फूला न समाया। आनन-फानन में वह मंत्री जी के पास पहुंचा। मंत्री जी के हाथ में उसने पत्र रखा। पत्र में केवल इतना ही आदेश था, ''पत्रवाहक को तुरंत कैद कर लिया जाए।''

शंभू को जेल में बंद कर दिया गया। किसी तरह, मौका निकाल कर उसने मंत्री जी को सारी बातें सच-सच बताईं। मंत्री ने राजा को सारी बात समझाई। राजा इस घटिया हरकत पर आग-बबूला हो उठे। उन्होंने शंभू जैसे मक्कार को उम्रकैद की सजा सुनाई।

बात कविराज तक पहुंची। शंभू को छोड़ देने का उन्होंने महाराज से बार-बार निवेदन किया। उनकी सज्जनता महाराज को गहरे तक छू गई।

शंभू को मुक्त कर दिया गया। पर अब वह मक्कार शंभू नहीं था। कविराज की उदारता ने उसे पश्चाताप की अग्नि में जलाकर कुंदन बना दिया था।

ज्योतिष का चक्कर

राजा कल्याणवर्मा का भाग्य पर बहुत अधिक विश्वास था। हाथ की लकीरों तथा ग्रहों के कारण ही मनुष्य को सुख या दुख मिलता है, ऐसा वह मानते थे। इसी कारण राजज्योतिषी की बन आई थी। वह राजा को शब्दजाल में फांस कर अपना उल्लू सीधा करने में लगा हुआ था।

राजा के हाथ कोई सफलता लगती तो उसकी पौ बारह हो जाती और किसी कार्य में आशा के अनुरूप यश नहीं मिलता तो ज्योतिषी इसका कारण दुष्ट ग्रह बताता।

राजा को उल्टी-सीधी सलाह देकर अब तक उसने काफी धन बटोर लिया था।

राज्य को सुचारू रूप से चलाने की जिम्मेदारी मंत्री सत्यव्रत पर सौंप कर राजा राजज्योतिषी द्वारा आयोजित निरर्थक अनुष्ठानों में मग्न रहते। सत्यव्रत बड़ा ही बुद्धिमान था। राजा को धूर्त ज्योतिषी के चंगुल में फंसा देख उसे बड़ा दुख होता। उसने राजा को एक-दो बार समझाने की कोशिश की पर कोई फायदा नहीं हुआ। उल्टे राजा कल्याणवर्मा बहुत नाराज हुए। ज्योतिषी को जैसे ही इस बात का पता चला तो उसने सत्यव्रत का सर्वनाश करने की प्रतिज्ञा ही कर डाली।

एक दिन भरे दरबार में ज्योतिषी राजा से बोला, ''महाराज, ग्रह बता रहे हैं कि जल्दी ही राज्य पर कोई संकट आने वाला है।''

राजा चौंके। उन्होंने पूछा, ''संकट? कैसा संकट?''

राज्य को पूर्व दिशा की ओर से आ रहे संकट से गुजरना पड़ेगा, ऐसा ग्रहों की स्थिति देखते हुए लगता है।''

''पूर्व की ओर से संकट? मैं कुछ समझा नहीं। साफ-साफ बताइए,''

''ग्रह स्पष्ट रूप से यह कह रहे हैं कि पूर्व दिशा में स्थित कोसल राज्य हमारे राज्य पर आक्रमण करने की योजना बना रहा है।'' ज्योतिषी बोला।

''राज्य पर शत्रु का आक्रमण और हमारे मंत्री को इसका पता नहीं?'' सत्यव्रत की ओर देखते हुए राजा क्रोध से बोले।

''महाराज, ऐसी कोई बात नही है। अगर शत्रु की ओर से आक्रमण की आशंका होती तो अपने गुप्तचर उसका पता लगाए बिना नहीं रहते।'' सत्यव्रत नम्रता से बोला।

''तो क्या ज्योतिषी जी झूठ बोल रहे हैं?''

''परंतु कोसल राज्य से तो हमारे संबंध मैत्रीपूर्ण हैं और....''

''चुप रहिए....मैं कुछ भी सुनना नहीं चाहता।'' राजा बोले और उन्होंने जल्दी से जल्दी वास्तविकता का पता लगाने का आदेश देकर दरबार का काम-काज समाप्त होने की घोषणा कर दी।

सत्यव्रत ने राजा को विश्वास दिलाने की भरपूर कोशिश की पर कोई फायदा नहीं हुआ। राजा ने इस तथाकथित संकट से उबरने के लिए कोई उपाय ढूंढ़ने के लिए राजज्योतिषी से कहा। उसने कुछ पोथियां लेकर उपाय ढूंढ़ने का नाटक किया और एक दिन एकांत में राजा से मिला।

अपने झोले में से ज्योतिषी ने कोई जड़ी-बूटी निकाली और साथ में कोयले का एक टुकड़ा। ये चीजें राजा को दिखलाते हुए वह बोला, "महाराज, यह जड़ी-बूटी मेरे गुरू ने मुझे दी थी, साथ में यह मंत्रसिद्ध कोयले का टुकड़ा भी दिया था। इनकी सहायता से भयानक से भयानक संकट का मुकाबला सहज ही किया जा सकता है, ऐसा उन्होंने कहा था।"

"अच्छा!"

"जिस दिशा से संकट आने का आशंका हो उस दिशा में जब भी हवा बहे, उसी समय यज्ञ कर उसमें यह जड़ी-बूटी डाली जाए तो संकट टाला जा सकता है.....परंतु......."

"परंतु क्या?"

"बात यह है कि यज्ञ में डाली जानी वाली जड़ी-बूटी की मात्रा, इस कोयले के टुकड़े से जो धुआं उत्पन्न होगा, ठीक उसके वजन के बराबर होना चाहिए, ऐसा गुरूदेव ने कहा था।"

"फिर?"

"दुर्भाग्य से इस कोयले के धुएं का वजन निकालने की विधि बताने से पहले ही वह चल बसे।" ज्योतिषी नकली निराशा से बोला।

"अब क्या किया जाए?" राजा चिंतित होकर बोले।

"हमें कोयले के धुंए का वजन निकालने की विधि ढूंढ़ने का प्रयत्न करना होगा। यह काम मंत्री जी जैसा कोई चतुर आदमी ही कर सकता है।" ज्योतिषी से बोला।

"हूं!" राजा ने हुंकार भरी और तुरंत ही सत्यव्रत को बुलवाया। उसे कोयले का वह टुकड़ा सौंपते हुए दो दिनों की भीतर उसके धुएं का वजन पता लगाने की आज्ञा दीं।

ज्योतिषी अपनी युक्ति पर फूला न समाया। भला धुएं का वजन कैसे किया जा सकता था? अब जरूर राजा सत्यव्रत पर नाराज होकर उसे मंत्री पद से हटा देगा या कोई और कड़ी सजा देगा, ऐसा वह सोचने लगा।

सत्यव्रत समझ गया कि यह ज्योतिषी की चाल है। वह ठंडे दिमाग से धुएं का वजन ढूंढ़ निकालने की तरकीब सोचने लगा।

दो दिनों बाद जब सत्यव्रत राजा के सम्मुख उपस्थित हुआ तो उसका शांत चेहरा देखकर ज्योतिषी को आश्चर्य हुआ। सत्यव्रत ने एक तराजू मंगवाकर उस कोयले के टुकड़े का वजन करवाया। वह वजन एक कागज पर लिखा गया। फिर उसने सावधानीपूर्वक कोयले को जलाया। कोयला जलकर राख हो गया तो उसकी राख को तौला गया। कोयले के वजन में से राख का वजन घटाकर जो उत्तर मिला वह धुएं का वजन होने की बात सत्यव्रत ने कही।

राजा बड़ा प्रसन्न हुआ, ज्योतिषी के लिए धुंए का यह वजन खरा मान लेने के अलावा कोई चारा नहीं था।



पूर्व दिशा की ओर बहती हवा का रुख देख कर एक दिन यज्ञ का नाटक ज्यातिषी ने किया और संकट टल जाने का विश्वास दिलाया।

कुछ दिन बीते। ज्योतिषी नई जुगत भिड़ाने में लग गया। बहुत सोच-विचार कर उसने एक योजना बनाई। अब वह मौके की तलाश में था।

जल्दी ही एक मौका उसके हाथ लगा। सत्यव्रत अपने भांजे के विवाह में सम्मिलित होने के लिए राजधानी से दूर गया हुआ था।

इधर ज्योतिषी ने साम-दाम-दंड-भेद की नीति अपनाते हुए कुछ दरबारियों को अपने षड्यंत्र में शामिल कर लिया।

और अचानक ही विचित्र घटनाओं का सिलसिला शुरू हो गया। एक दिन राजा का प्रिय घोड़ा मृत पाया गया, राजधानी में कुछ जगह अज्ञात कारणों से आग लगने की घटनाएं हुई, शहर से कुछ लोग अचानक लापता हो गए। राजधानी के समीप वाली नदी के बांध में बड़ी भारी दरार पड़ गई.....और भी कई अजीब घटनाएं हुईं। राजधानी में आतंक फैल गया।

राजा इन घटनाओं के कारण परेशान हो गए। इन सारी घटनाओं के पीछे ज्योतिषी का हाथ होने की भनक तक उन्हें नहीं मिली।

मौका पाकर ज्योतिषी ने इन विचित्र घटनाओं का कारण दैवी प्रकोप बताया। इस प्रकोप को दूर करने का उपाय पूछा जाने पर वह बोला, ''महाराज, लगता है कि ग्रह हमारे राज्य से नाराज हो गए हैं। उन्हें शांत करने के लिए एक मात्र उपाय है नरबलि।''

''ठीक है, तुरंत ही मुनादी करवा देता हूं। मुझे विश्वास है कि राज्य को इस संकट से उबारने के लिए कई लोग स्वयं को प्रस्तुत करने में जरा भी नहीं हिचकिचाएंगे।''

''पर महाराज, ग्रहों को सामान्य मनुष्य की बलि नहीं चाहिए। उन्हें तो ऐसा आदमी चाहिए जो सच्चरित्र हो, जिसने जिंदगी में कभी झूठ नहीं बोला हो....अब ऐसा आदमी पाने के लिए अति विशिष्ट व्यक्ति की खोज करनी होगी।'' ज्योतिषी ने चाल चली।

एक तरह से उसने सत्यव्रत की ओर ही संकेत कर दिया था। यह संकेत राजा की समझ में आ गया।

सत्यव्रत के लौटते ही राजा ने सारी स्थिति स्पष्ट करते हुए राज्य के हित के लिए उसका बलिदान आवश्यक होने की बात कही।

कुछ क्षण सोचकर सत्यव्रत बोला, ''महाराज, यह तो परम सौभाग्य की बात है। यदि मेरे बलिदान से राज्य का हित होता हो तो मुझे अपने प्राण देना सहर्ष स्वीकार है। किंतु.....

''किंतु क्या?''

''ज्योतिषी जी ने बताया है कि ऐसे आदमी की बलि चाहिए जिसने कभी झूठ नहीं बोला हो और आप तो जानते ही हैं कि शत्रु की चालों से बचने के लिए राज्य के हित में कई बार झूठ भी बोलना पड़ता है। मैं कई बार आपकी सम्मति से झूठ बोला हूं। चाहे किसी भी कारण से झूठ बोलना पड़े, झूठ तो आखिर झूठ होता है।'' सत्यव्रत शांत स्वर में बोला।

''आप ठीक कहते हैं।'' राजा बोले, ''अब क्या किया जाए?''

''महाराज, यदि आज्ञा हो तो मैं कुछ कहना चाहूंगा।'' सत्यव्रत नम्रता से बोला।

''आपको ऐसा व्यक्ति न सामान्य जनों में मिल सकता है और न ही राज दरबारियों में। कोई विशिष्ट विद्वान ही इन कसौटियों पर खरा उतर सकता है।'' सत्यव्रत ज्योतिषी की ओर देखता हुआ बोला।

ज्योतिषी के पैरों तले की जमीन खिसकने लगी, भय से पीला पड़ गया था वह।

राजा सोच में पड़ गए । कुछ देर बाद जैसे ही उन्होंने ज्योतिषी की ओर देखा तो वह परेशान सा हो गया। उसे लगा कि अब महाराज उसे ही बलिदान देने के लिए कहेंगे। राजा कुछ बोलना ही चाहते थे कि ज्योतिषी रोता हुआ उनके चरणों पर गिर पड़ा और कहने लगा, ''मुझे क्षमा कर दें महाराज........मुझसे बड़ी भूल हो गई।''

राजा को घोर आश्चर्य हुआ। उनके कुछ पूछने से पूर्व ही ज्योतिषी ने सारी बातें बताते हुए क्षमायाचना की।

ज्योतिषी की करतूत देख राजा को बड़ा क्रोध आया। ऐसे आदमी के चक्कर में पड़कर सत्यव्रत जैसे मंत्री के प्रति अन्याय हुआ, यह सोच उन्हें बड़ा पश्चाताप हुआ।

उन्होंने तुरंत ही ज्योतिषी और उसके साथियों की सारी संपत्ति जब्त करवा दी और सभी को देश निकाला दे दिया।

कंजूस का दान

आनंदपुर में लगभग पंद्रह वर्ष पूर्व एक पाठशाला खोली गई। अब तक कितने ही विद्यार्थियों ने वहां शिक्षा पाई थी, पर पंद्रह वर्ष बीत जाने पर भी पाठशाला की अच्छी इमारत नहीं बनवाई थी, कुछ कक्षाएं तो अब भी किसी पेड़ के नीचे लगती। ठंड के दिनों में नन्हें-नन्हें बालक ठंड से परेशान होते और गर्मियों में लू के थपेड़े सहते। बारिश में तो मजबूरन उन्हें छुट्टी देनी पड़ती, जिससे अध्ययन में विघ्न पड़ता। सारे गांव वाले इस बात को अच्छी तरह जानते थे, पर कोई कुछ करने आगे नहीं आता।

इसी स्कूल में एक अध्यापक थे, विद्याधर जी। बड़े ही बुद्धिमान, सरल, एवं दयालु थे। पाठशाला की हालत देख उन्हें बड़ा दुख होता। उन्होंने गांव वालों को समझाने का बहुत यत्न किया, पर उनके सारे प्रयत्न विफल हो गए। वे चाहते थे कि गांव वालों की मदद से पाठशाला के लिए नई इमारत खड़ी की जाए। गांव वाले उनकी बातें ध्यान से सुनते जरूर, पर जब पैसों की बात शुरू होती तो कन्नी काट जाते।

विद्याधर जी रात-दिन पाठशाला की इमारत के बारे में सोचा करते। काफी सोच-विचार के बाद उनके दिमाग में एक योजना आई।

गांव में शिवनंदन नाम का एक व्यापारी था। उसका अनाज का बहुत बड़ा व्यापार था। हर वर्ष वह लाखों कमाता था। पर वह था बड़ा कंजूस। खर्च करना तो जैसे वह जानता ही नहीं था। सारा गांव उसे कंजूस सेठ के नाम से पुकारता।

विद्याधर एक दिन सुबह-सुबह शिवनंदन के घर पहुंचे। उन्हें आया देखकर सेठ को बड़ा आश्चर्य हुआ।

''क्या मैं अन्दर आ सकता हूं?'' विद्याधर जी ने पूछा।

''हां..हां...आइए,'' सेठ ने किसी तरह उनका स्वागत किया।

''आपको एक कष्ट देने आया हूं।''

''पर मैं ठहरा एक साधारण सा व्यापारी, भला मैं आप की क्या मदद कर पाऊंगा?'' सेठ टालने के अंदाज में बोला।

''पाठशाला की इमारत कितनी खस्ताहाल हो चुकी है यह तो आप अच्छी तरह जानते हैं....''

''पर मैं तो कोई मदद नहीं कर पाऊंगा। आज कल व्यापार बड़ा मंदा चल रहा है। मैं खुद बड़ी परेशानी में फंसा हुआ हूं।'' घबराए हुए स्वर में सेठ जल्दी-जल्दी बोल गया।

''नहीं, यह बात नहीं है।''

''फिर?'' सेठ ने पूछा।

''आप आज शाम तक के लिए मुझे दस हजार रुपए दें...साथ ही इस कागज पर हस्ताक्षर कर दें।'' विद्याधर उसके सामने एक कागज फैलाते हुए बोले।

कागज पर पाठशाला की इमारत के लिए दान देने की अपील की गई थी। साथ में दानदाता का नाम, दान की रकम तथा दानदाता के हस्ताक्षर के लिए स्तंभ बने हुए थे।



विद्याधर जी की बात सुनकर सेठ घबरा गया। दिन भर के लिए दस हजार रुपए देने की बात उसके गले से नीचे उतरना असंभव सी बात थी। यह सोचने लगा, ''क्या पता रुपया वापस मिले या न मिले। यह सारा झंझट आखिर किस लिए?''

''आप विश्वास रखिए....मैं शाम होते ही आपके पैसे लौटा दूंगा।'' विद्याधर बोले।

''लेकिन....''

''बात यह है कि आप ने दस हजार रुपए चंदे के रूप में दिए हैं, यह देखकर गांव वाले भी पाठशाला के लिए चंदा देंगे। कृपया आप ना मत कहें।''

और हुआ भी यही! शिवनंदन जैसे कंजूस ने दस हजार रुपए दान में दिए हैं, यह देखकर आनंदपुर वासियों में चंदा देने की मानो होड़ सी लग गई। शाम तक ढेर सारा पैसा इकट्ठा हो गया। इतने धन से पाठशाला के लिए शानदार इमारत खड़ी की जा सकती थी।

शाम हुई। विद्याधर अपने वचन के अनुसार शिवनंदन के यहां पहुंचे। शिवनंदन ने अपार हर्ष के साथ उनका स्वागत किया।

विद्याधर जी ने सेठ के दस हजार रुपए लौटाने चाहे तो पैसे लेने से इन्कार करते हुए वह बोला, ''आज मुझे पता चला कि किसी को कुछ देने में कितना आनंद है। आज सुबह से ही न ज़ाने कितने लोगों ने मुझे बधाई दी। मेरे इस छोटे से काम की भूरि-भूरि प्रशंसा की। भले कार्यों के लिए किया गया त्याग आदमी को कितना संतोष देता है, यह मुझे अब मालूम हुआ। आप के कारण ही वह संतोष मुझे मिला इसलिए मैं आपका आभारी हूं।''

साथ ही शिवनंदन ने और दस हजार रुपए विद्याधर जी को थमा दिए!

मेहनत का एक पैसा

एक गरीब ब्राह्मण था। बड़ा ही विद्वान। ज्ञानी होने के बावजूद उसमें घमंड जरा भी नहीं था। वह एक नेक दिल इन्सान था। दान के मामले में भी उसके सिद्धांत दूसरों से अलग थे। दान स्वीकारने में उसे कोई आपत्ति नहीं थी, पर उसकी एक शर्त थी। इस शर्त के मुताबिक वह केवल उन्हीं लोगों से दान लिया करता, जिन्होंने अपनी मेहनत से कुछ कमाया हो।

इन्हीं कारणों से वह बहुत गरीब था। वह गरीब ज़रूर था पर उसे इसका दु:ख नहीं था। जो भी मिलता, उसमें गुजारा करके ही वह संतुष्ट हो जाता।

लेकिन उसकी पत्नी इस स्थिति से सर्वथा असंतुष्ट थी। उसे लगता था कि और ब्राह्मणों की तरह उसका पति भी खूब कमाए ताकि ठाठ से रहा जा सके। ब्राह्मण विद्वान होने के बावजूद पत्नी की नजर में मूर्ख था। ब्राह्मणी हरदम अपने पति को कोसा करती। छोटी-छोटी बातों को लेकर झगड़ा करने लग जाती।

ब्राह्मण उसे समझाने की कोशिश करता पर वह अपने पति की कोई भी बात नही सुनती, उल्टे गुस्से में आकर वह पति को लताड़ने लगती। ब्राह्मण बेचारा चुप रहने में ही भलाई समझता।

एक बार वह मायके गई थी। वहां पर उसने भाइयों को अपना दुखड़ा सुनाया। बहन की बातें सुनकर भाइयों के हृदय सहानुभूति से भर गए। काफी सोच-विचार के बाद बड़े भाई ने बहन को एक राजा के बारे में जानकारी दी। यह राजा स्वयं भी बड़ा विद्वान था तथा पंडितों, विद्वानों को दिल खोल कर दान दिया करता। राजा के पास दान मांगने के लिए जो भी जाता, वह कभी खाली हाथ न लौटता।

यह जानकारी पाकर ब्राह्मणी बड़ी खुश हुई। उसने किसी भी तरह अपने पति को इस राजा के पास भेजने का निश्चय किया और लौट आई।

लौट कर आते ही ब्राह्मणी ने अपने पति को उस राजा की जानकारी दी तथा वहां जा कर भरपूर धन मांग लाने के लिए मनाने लगी।

ब्राह्मण को यह पसंद नहीं था। उसने साफ इनकार कर दिया। ब्राह्मण के इनकार करते ही ब्राह्मणी गुस्से में तमतमा उठी और उसने जान देने की धमकी दी। हार कर ब्राह्मण ने उसकी बात मान ली।

वह घर से निकल पड़ा। राजा के पास पहुंचा। राजा ने ब्राह्मण का खूब आव-भगत की। राजा के पूछने पर उसने बताया, ''महाराज, मैं एक गरीब ब्राह्मण हूं। आपकी दानशीलता की ख्याति सुनकर दान पाने की आशा से आया हूं।''

''आपको दान देकर मैं कृतार्थ हो जाऊंगा।'' राजा बोला और उसने अपने खजांची को इशारा किया ही था कि ब्राह्मण बोला, '' पर महाराज, मेरी एक शर्त है।''

''शर्त? कैसी शर्त?'' राजा ने आश्चर्य से पूछा।

''मैं केवल उसी वस्तु का दान लूंगा जो आपने अपनी मेहनत से कमाई हो।'' ब्राह्मण ने कहा।



ब्राह्मण की बात सुनकर राजा सोच में पड़ गया। वह सोचने लगा, 'मैं राजा ज़रूर हूं पर मेरी यह संपत्ति मेरे श्रम का फल नहीं है। यह तो राज्य की संपत्ति है।'

कुछ देर गंभीरता से सोचने के बाद राजा बोला, "विप्रवर, मुझे एक दिन का समय दीजिए। आप कल आ सकें, तो बड़ी कृपा होगी।"

ब्राह्मण चला गया।

ब्राह्मण को दान देने के लिए राजा के पास मेहनत करने के अलावा कोई दूसरा रास्ता नहीं था।

वेष बदल कर राजा काम ढूंढ़ने निकला। काम ढूंढ़ते-ढूंढ़ते वह एक लुहार के पास पहुंचा। लुहार से उसने काम मांगा तो लुहार बोला, "इस गांव में नये दीखते हो। क्या काम करोगे?"

"कुछ भी करने के लिए मैं तैयार हूं।" राजा बोला।

और लुहार ने उसे हथौड़े से गर्म लोहे को पीटने का काम दिया। दिन भर की मजदूरी तय हुई एक पैसा!

राजा ने हथौड़ा सभांला और लोहा पीटने लगा। राजा को ऐसे काम की आदत नहीं थी। लगातार लोहा पीट-पीट कर उसके हाथों में छाले पड़ गये, पर उसने अपना काम जारी रखा। शाम हुई। लुहार ने राजा को उसकी मजदूरी दे दी।

राजा लौट आया।

दूसरे दिन ब्राह्मण के दरबार में आने पर राजा ने उसे आदरपूर्वक बिठाया और उसके हाथ पर पैसा रखता हुआ बोला, "केवल यही मेरी मेहनत की कमाई है।"

ब्राह्मण वह छोटा सा सिक्का पाकर बहुत खुश हुआ। उसने राजा को आर्शीवाद दिया और लौट आया।

ब्राह्मण घर पहुंचा। अधीर होकर ब्राह्मणी ने पूछा, "राजा ने कुछ दिया है?"

"हां।"

"क्या दिया? जल्दी से दिखाइए न।"

"यह दिया।" कह कर ब्राह्मण ने अपनी पत्नी की हथेली पर वह छोटा सा सिक्का रख दिया।

"केवल एक पैसा?" ब्राह्मणी को घोर आश्चर्य हुआ।

"हां, राजा ने अपने जीवन में मेहनत से केवल इतना ही कमाया है।"

ब्राह्मण की बात सुन कर वह गुस्से से बिफर उठी और उसने वह सिक्का आंगन में फेंक दिया।

दूसरे दिन सवेरे ब्राह्मण जैसे ही घर से बाहर आया तो आंगन में उसे एक पेड़ दिखाई दिया। यह पेड़ ठीक उसी जगह उगा था,जहां पर ब्राह्मणी ने पैसा फेंका था। यह पेड़ अन्य पेड़ों से बिल्कुल अलग था। इस पेड़ पर हीरे जड़े सोने के फल लटक रहे थे।

यह अद्भुत पेड़ देख कर वह आश्चर्यचकित रह गया। उसने झट अपनी पत्नी को आवाज दी, पर वह बाहर नहीं आई। ब्राह्मण दौड़कर अन्दर गया और अपनी पत्नी का हाथ पकड़कर उसे बाहर ले आया।

बाहर आते ही उस चमत्कारी पेड़ को देखकर ब्राह्मणी खुशी से झूम उठी। ब्राह्मण बोला, "यह उसी पैसे का चमत्कार है। इस पेड़ पर सोने के जो फल लदे हुए हैं, ये सब मेहनत के फल हैं।"

कविता का मूल्य

अनंतनाग बड़ा ही पराक्रमी राजा था। उसे पराक्रमी एवं उद्यमी लोग प्रिय थे। रात-दिन वह राज्य के विस्तार तथा संपन्नता बढ़ाने के विचार में खोया रहता पर साहित्य तथा साहित्यकारों के प्रति वह बड़ा ही अनुदार था।

उसकी दृष्टि में कविगण तथा कविता व्यर्थ की चीजें थीं। कविता लिखना व सुनना उसे समय का अपव्यय करना लगता। उसका कहना था कि कविता से आदमी को कोई सुख प्राप्त नहीं होता। सुख प्राप्ति के लिए तो कड़ी मेहनत तथा पराक्रम की आवश्यकता होती है।

वह सदा कवियों की खिल्ली उड़ाया करता, उसके दरबार में जो भी काव्यपाठ करने आता वह अपना सा मुंह लेकर लौटता। जब कोई कवि सम्मान पाने तथा धनप्राप्ति की आशा से उसके दरबार में हाजिर होता, तो उसका जोरदार स्वागत किया जाता। राजा की आज्ञा से काव्यपाठ शुरू होता, सारा दरबार काव्यपाठ सुनता, काव्यपाठ की समाप्ति पर राजा कहता—''कविवर, आपने अपनी कविता से हमें बहुत ही प्रसन्न किया है आपकी कविता का सम्मान करने में मुझे बड़ी खुशी होगी।''

राजा की बातों से कवि हर्षविभोर हो जाता, लेकिन उसकी वह खुशी जल्दी ही काफूर हो जाती।

राजा की आज्ञा से दरबार में एक तराजू लाया जाता। एक पलड़े में कवि की कविता का कागज रखा जाता तथा दूसरे पलड़े में सोना। भला कागज का वजन कितना होता है?.....और यह सोना कवि को पुरस्कार स्वरूप दिया जाता।

यह इनाम देते समय राजा कहता— ''कविराज, आपकी कविता के वजन के बराबर आपको सोना दिया जा रहा है। आपकी मेहनत के अनुसार ही आपको फल की प्राप्ति हो रही है....।''

और राजा बड़ी जोर से हंसता। कुछ दरबारी भी उसकी हंसी में सम्मिलित होते और कवि को अपमानित होकर लौटना पड़ता।

कुछ लोगों को यह बात बिल्कुल पसंद नहीं थी, पर वे कर भी क्या सकते थे?

समय बीतता गया। अब कविगण दरबार में काव्यपाठ करने से कतराने लगे। धीरे-धीरे यह कला उस राज्य से लुप्त होने लगी।

इसी राज्य में एक कवि थे, आनंदवर्द्धन। बड़ी ही सुंदर कविताएं लिखा करते। राजधानी से दूर एक छोटे से देहात में रहा करते। भगवान की भक्ति करना, दीन-दुखियों की सेवा करना तथा गांव वालों को ज्ञान की बातें बतलाकर उनका जीवन सुखी करने का प्रयत्न करना यही उनके जीवन का लक्ष्य था। अपनी कविताओं द्वारा वे गांव वालों की प्रसन्नता बढ़ाने की भरसक यत्न करते, उन्हें धन का कोई मोह नहीं था और इसीलिए वे कभी अनंतनाग के दरबार में नहीं गए।

एक दिन भरी सभा में राजा ने गर्व के साथ कहा—''मेरे विचार से अब हमारे राज्य से कवि नामक निकम्मे प्राणी समाप्त हो गए हैं।''



कुछ लोगों ने राजा की हां में हां मिलाई। पर मंत्री बोला– "नहीं महाराज, अब भी हमारे राज्य में एक कवि अवश्य है जो आज तक बराबर कविताएं लिख रहा है।"

"कौन है वह?" राजा ने उत्सुकता से पूछा।

"आनंदवर्द्धन" –मंत्री ने कहा और उसने आनंदवर्द्धन के बारे में सारी जानकारी दी। आनंदवर्द्धन अब तक दरबार में काव्यपाठ करने नहीं आए यह बात सुनकर राजा के अहंकार को ठेस लगी। उसने तत्काल आनंदवर्द्धन को सम्मान सहित दरबार में उपस्थित होने की आज्ञा दी। राजा के सैनिक आनंदवर्द्धन को लिवा लाए। दरबार में पहुंच कर आनंदवर्द्धन ने महाराज को प्रणाम किया।

राजा बोला–"कविवर, सुना है आप बड़ी ही सुंदर कविताएं लिखते हैं। यदि आप दरबार में काव्यपाठ कर सकें तो हमें बड़ी खुशी होगी।"

आनंदवर्द्धन, राजा के स्वभाव से अच्छी तरह परिचित थे। वे बोले–"महाराज, दरबार में काव्यपाठ करना मेरे लिए परमसौभाग्य की बात होगी। किंतु....

"किंतु क्या?"

"आप अन्यथा न लें महाराज। पर मेरी एक शर्त होगी जिसके अनुसार ही मैं काव्यपाठ कर सकूंगा।"

राजा को कुछ क्रोध जरूर आया पर अपने आपको संयत करते हुए बोला–"कहिए, क्या शर्त होगी?"

"मैं दरबार में काव्यपाठ करूंगा लेकिन उस समय मुझे कोई न देख पाए।"

राजा को यह शर्त अजीब लगी पर उसने यह शर्त मान ली। आनंदवर्द्धन ने कुछ दिनों का समय मांगा और लौट पड़े।

एक-एक करके दिन बीत गए। काव्यपाठ का दिन आया। सारा दरबार भरा हुआ था। वर्षों बाद दरबार में काव्यपाठ होने जा रहा था। सारे दरबारी कविताएं सुनने के लिए उत्सुक थे।

दरबार की ठीक बीचोंबीच मोटे-मोटे पर्दों से एक कमरा बनाया गया था, जहां बैठकर आनंदवर्द्धन काव्यपाठ करने वाले थे। थोड़ी देर बाद आनंदवर्द्धन पधारे। उनके साथ कुछ लोग थे, जिनके सिर पर भारी संदूक लदे हुए थे। ये लोग उस पर्दे वाले कमरे में गए तथा संदूक रखकर बाहर आए और सामान्यजनों में जाकर फर्श पर बैठ गए।

संदूक देखकर सारा दरबार आश्चर्यचकित रह गया। लोग आपस में काना-फूसी करने लगे। थोड़ी ही देर बाद राजा अनंतनाग पधारे। सारा दरबार शांत हुआ।

राजा ने काव्यपाठ शुरू करने की आज्ञा दी। आनंदवर्द्धन ने महाराज को प्रणाम किया और बड़े अदब से उठकर उस पर्देवाले कमरे में दाखिल हुए।

सारे दरबारी आतुर होकर पर्दे से बने उस कमरे की ओर देख रहे थे। कुछ ही क्षणों में दरबार में आनंदवर्द्धन की धीर-गम्भीर वाणी गूंजने लगी। उनके मुंह से निकला एक-एक शब्द दरबारियों के कानों में रस घोलने लगा। मंत्रमुग्ध होकर सारे दरबारी काव्यपाठ सुनने लगे। राजा भी इस काव्यपाठ से प्रभावित हुआ। काफी समय बाद जब काव्यपाठ समाप्त हुआ तो सारे दरबारियों ने मुक्तकंठ से आनंदवर्द्धन की प्रशंसा की।

उस पर्दे वाले कमरे से बाहर आकर आनंदवर्द्धन ने मुस्कराते हुए दरबारियों द्वारा किए गए इस सम्मान को स्वीकार किया।

राजा को यह बात पसंद नहीं आई। उसने व्यंग्यवाणी में कहा—''कविवर, आपने बहुत ही सुंदर कविताएं सुनाईं। हमारे दरबार की रीति के अनुसार आपका उचित सम्मान किया जाएगा। कृपया आप अपनी कविताएं हमारे सामने प्रस्तुत करें।''

आनंदवर्द्धन ने फर्श पर बैठे अपने साथियों को इशारा किया। उनके साथी अपने स्थान से उठे और उस पर्दे वाले कमरे में जाकर अंदर से पत्थर के बड़े-बड़े चौकोर टुकड़े लाकर रखने लगे।

सारा दरबार चकित रह गया। राजा भी स्तब्ध रह गया। आनंदवर्द्धन की कविताएं उन पत्थरों पर खुदी हुई थीं। देखते ही देखते वहां पर पत्थरों का ढेर सा लग गया। इन पत्थरों का वजन कई मन था।

पत्थरों को तौल कर जब उनके बराबर का सोना आनंदवर्द्धन को दिया जाने लगा तो वे नम्रभाव से बोले—''महाराज, मुझे इस सोने का कोई लालच नहीं है। इस सोने को आप भले कार्यों में लगा दें...और हां, एक बात मैं आपसे जरूर कहना चाहूंगा कि संगीत, कला और साहित्य के बिना आदमी पशु समान ही है।

''यह ठीक है कि कला और साहित्य जगत में धूर्त, घंमडी, लालची, आत्मसम्मान विहीन, आलसी और जनजीवन से कटे लोग भी हैं पर सच्चे साधक भी हैं। आपको ऐसे साधकों को परखना चाहिए और उनका अपमान नहीं करना चाहिए।''

और अपने साथियों को लेकर आनंदवर्द्धन चल पड़े। राजा अनंतनाग के दरबार में फिर कभी किसी सच्चे प्रतिभाशाली कवि का अपमान नहीं हुआ।

नकल का नतीजा

लोगों के दिल में स्थान पाने के लिए जो गुण आवश्यक होते हैं, वे सारे गुण रघु में थे। रामपुर का बच्चा-बच्चा रघु को केवल जानता ही नहीं था बल्कि उसे बेहद पसंद भी करता। समस्या किसी की भी हो, उसे हल करने के लिए जी-जान से जुट जाना रघु का स्वभाव था। दूसरों की सहायता करना ही उसने अपना धर्म मान लिया था। बड़े-बूढ़ों की सेवा वह जिस मनोयोग से करता, उसी प्रकार बच्चों की खुशी के लिए भी प्रयत्नरत रहता। बच्चों के साथ खेलना उसे बहुत भाता। बच्चों के मन को समझने की अद्‌भुत क्षमता थी उसमें। बच्चों की छोटी सी दुनिया में 'रघु चाचा' बड़ा ही लोकप्रिय था।

संपत्ति के नाम पर उसके पास छोटा सा खेत था। वह कड़ा परिश्रम करता। उसकी आय सीमित ज़रूर थी पर वह इसी में संतुष्ट था। इतना ही नहीं, अपनी आय का थोड़ा सा हिस्सा वह दान-धर्म में खर्च भी करता।

एक बार रघु अपने चचेरे भाई के विवाह में सम्मिलित होने के लिए सपरिवार उसके घर गया।

दो दिन बीते। तीसरे दिन आसमान बादलों से घिर गया। देखते ही देखते तूफानी वर्षा शुरू हुई। दिन बीत गया, रात आई। वर्षा थमने का नाम ही नहीं ले रहा थी। सारी रात पानी बरसता रहा। लोग अपने घरों में दुबके हुए थे। इस मौके का लाभ उठाकर चोरों ने रघु के घर में सेंध लगाई और सारा सामान लेकर चम्पत हो गए।

सुबह हुई। लोग अपने-अपने कामों में लग गए। माधव भी अपने खेतों की ओर निकल पड़ा था। खेतों पर जाते समय उसे रघु के घर के सामने से ही गुजरना पड़ता। ज्योंही वह रघु के घर के समीप पहुंचा तो घर की दीवार टूटी हुई देख कर उसका माथा ठनका। वह जल्दी-जल्दी टूटी हुई दीवार के पास पहुंचा। वहां से अंदर झांकने पर सारा माजरा उसकी समझ में आ गया।। उसने तुरंत ही मुखिया को इस की खबर दी। आस-पास के लोगों को भी यह बात मालूम हो गई। सारा गांव ही वहां इकट्ठा हो गया। पंचो ने आपस में सलाह-मशविरा कर रघु को यह खबर देने के लिए एक आदमी भेज दिया।

संदेश मिलते ही रघु दौड़ा चला आया। खाली पड़ा घर देख कर उसकी पत्नी शोकमग्न हो गई। रघु की आंखों में भी पानी भर आया। मां-बाप को रोता देख बच्चे भी रो पड़े। यह करुणाजनक दृश्य देखकर गांववालों के दिल पसीज गए।

पर कोरी सहानुभूति जताने से तो कुछ होने वाला नहीं था, गांववालों ने रघु का दुख दूर करने का निश्चय किया। बड़े-बूढ़ों ने सोच-विचार कर एक योजना बनाई। उन्होंने अपनी योजना गांववालों के सम्मुख रखी। गांववालों ने उसे सहर्ष स्वीकारा। इस योजना के अनुसार प्रत्येक को यथाशक्ति रघु की मदद करनी थी। गांव में रहने वाले हर व्यक्ति ने अपनी-अपनी क्षमता के अनुसार धन दिया। रघु की मदद करने में बच्चे भी पीछे नहीं रहे



छोटे-छोटे बच्चों ने अपनी गुल्लकों से पैसे निकाल कर दिए। देखते ही देखते बहुत सारे पैसे जमा हो गए। इन पैसों से ढ़ेर सारी चीजें खरीद कर रघु को भेंट-स्वरूप दी गईं। रघु का जितना सामान चोरी हुआ था, उससे कहीं अधिक गांववालों ने उसे दिया।

गांववालों का स्नेह देख कर रघु की आंखें खुशी से भर आईं। बच्चों के प्यार ने तो उसे अभिभूत कर दिया। उसकी खुशी फिर से लौट आई।

इसी गांव में एक साहूकार था। उसका एक छोटी सी दुकान थी। दुकान तो मात्र दिखावे के लिए थी। असल में वह ब्याज पर पैसे उधार देने का धंधा किया करता। आर्थिक संकट में फंसे लोगों को मनमाने ब्याज पर पैसा देकर लूटना उसके बाएं हाथ का खेल था। दया, सहानुभूति जैसे शब्द उसके शब्दकोश में थे ही नहीं! लोगों को लूट कर उसने काफी संपत्ति अर्जित कर ली थी।

रघु को गांववालों द्वारा मिली मदद देखकर उसे एक युक्ति सूझी। बिना कुछ किए गांववालों से पैसा बटोरने के लिए उसने एक योजना बनाई। अपने घर के बहुत सारे बर्तन, कीमती चीजें उसने चुपके से अपने एक रिश्तेदार के घर रखवा दीं जो रामपुर से काफी दूर रहता था। एक रात अपनी योजना को अंतिम रूप देने के लिए वह घर से निकल पड़ा। उसके हाथों में एक बक्सा था जिसमें ढ़ेर सारे जेवर तथा नकदी रखी हुई थी। इधर-उधर देखता हुआ वह गांव के पश्चिम में स्थित एक पुरानी हवेली के खंडहरों के पास पहुंचा। वहां पड़े कुछ पत्थर हटा कर उसने सावधानीपूर्वक वह बक्सा वहां रख दिया। हटाए हुए पत्थर उसने बक्से पर रख दिए। ऊपर से मिट्टी डाल कर अच्छी तरह से बक्सा छिपाकर वह घर लौटा।

सुबह होने को आई तो वह और उसकी पत्नी जोर-जोर से रोने-कलपने लगे। उनका रोना-धोना सुनकर पड़ोसी वहां इकट्ठे हुए। लोगों के पूछने पर साहूकार और भी जोर से रोता हुआ बोला, ''मैं तो लुट गया, चोरों ने मेरी सारी कमाई लेकर मुझे कंगाल कर दिया। हे भगवान, अब मैं क्या करूं?''

कुछ ही देर में यह खबर सारे गांव में आग की तरह फैल गई। सारे लोग वहां इकट्ठे हो गए। कुछ लोगों ने सहानुभूति भी दिखलाई। पर ज्यादातर लोगों पर साहूकार के रोने-धोने का कोई असर नहीं हुआ। मुखिया के पूछने पर साहूकार ने बताया, 'अचानक ही कोई आठ-दस आदमी लाठी-कुल्हाड़ी लिए मेरे घर में घुसे और जान से मार देने की धमकी देते हुए सारा माल ले कर भाग गए। प्राणों के भय से मैं चिल्ला भी नहीं सका।''

कुछ देर बाद एक-एक करके सारे लोग चले गए। साहूकार को लगा था कि रघु की तरह लोग उसकी भी मदद करेंगे, पर किसी ने उसे कानी कौड़ी भी नहीं दी। लोगों का खून चूसने वाले इस आदमी का भला कौन मदद करता?

अपनी योजना विफल होती देख साहूकार परेशान हो गया।

दिन चढ़ आया। साहूकार को खंड़हर में छिपाए धन की याद आई। दिन में वहां पर छिपाया बक्सा लाना भी संभव नहीं था। वह रात होने का इन्तजार करने लगा।

शाम को खंडहर के समीपवाले मैदान में कुछ बच्चे खेल रहे थे। अचानक ही वहां एक काला नाग दिखाई दिया। बच्चों में भगदड़ मच गई। बच्चों की चीख-पुकार सुनकर कई लोग वहां इकट्ठे हो गए। लोगों ने तेजी से खंड़हर की ओर बढ़ते हुए नाग को देखा तो लाठियां ले कर उसके पीछे दौड़े। अपनी जान बचाने के लिए नाग खंड़हर में पड़े उन पत्थरों में घुस गया जहां साहूकार ने अपना बक्सा छिपा रखा था। लोगों ने पत्थर हटा कर नाग को मार दिया। पत्थर हटाते ही लोगों की नजर बक्से पर पड़ी। उत्सुकता से बक्सा खोला गया। अन्दर ढ़ेर सारे गहने और नकदी देख कर सभी को आश्चर्य हुआ।

मुखिया ने पूछताछ की पर इस संपत्ति पर अपना हक साबित करने वाला कोई आगे नहीं आया। साहूकार को मानो सांप सूंघ गया! वह कुछ भी नहीं बोल पाया। यदि वह इस धन पर अपना हक होने की बात करता तो कोई उस पर विश्वास नहीं करता। कोई सबूत भी तो नहीं था उसके पास। घर पहुंच कर अपनी किस्मत पर वह रोने लगा।

मुखिया ने इस धन को गांव की संपत्ति घोषित कर इसका उपयोग गांव की योजनाओं में करने की घोषणा कर दी।

गहनों की आवभगत

गणेशी बहुत ही सीधा-साधा मज़दूर था। दिन भर की मेहनत के बाद उसे जो कुछ मिलता, उसी में संतुष्ट रहता। उसकी पत्नी लक्ष्मी सुशील स्त्री थी। उनके दो बच्चे थे। एक लड़का और एक लड़की। गणेशी व लक्ष्मी गरीब ज़रूर थे पर उन्होंने अपने बच्चों को बड़े लाड़-प्यार से पाला था। वे उन्हें केवल प्यार ही नहीं करते, अच्छी-अच्छी बातें भी सिखाते। बच्चे भी आज्ञाकारी थे। भाई-बहन में बहुत प्रेम था। उनके नाम थे मोहन व सीता।

दुर्भाग्य से एक दुर्घटना में गणेशी व लक्ष्मी की मृत्यु हो गई। बच्चे अनाथ हो गए। गांववालों ने अपार सहानुभूति से कुछ दिनों तक भाई-बहन की मदद की पर ऐसा कितने दिनों तक चलता?

बड़ा होने के नाते मोहन पर जिम्मेदारी आ पड़ी। वह कड़ी मेहनत कर के कमाने लगा। सीता छोटी होने के बावजूद अपने भाई के काम में हाथ बटाती। खाली समय का सदुपयोग दोनों पढ़ाई में करते।

पढ़ने-लिखने के साथ-साथ किसी भी काम को लगन के साथ करने की मोहन की यह आदत एक दिन रंग लाई। सेठ श्यामलाल ने उसे अपने यहां मुनीम की नौकरी दी। कुछ ही दिनों में उसने व्यापार के सारे गुण सीख लिए। सेठ जी की मदद से उसने अलग से व्यापार शुरू किया और जल्दी ही वह एक सफल व्यापारी के रूप में जाना जाने लगा।

लोग उसे विवाह करने की सलाह देते तो वह पहले अपनी प्रिय बहन के विवाह की बात करता। अपनी बहन को अच्छा घर मिले और वह सुखी रहे, ऐसा वह चाहता था।

व्यापार के सिलसिले में उसकी भेंट रघुवीर नामक एक व्यापारी से हुई। रघुवीर अमीर होने के साथ-साथ बुद्धिमान भी था। उसका स्वभाव भी बड़ा अच्छा था। यह व्यापारी अपनी बहन के लिए सुयोग्य वर है, ऐसा सोचकर भाई ने विवाह की बात चलाई। कुछ ही दिनों में रघुवीर व सीता का विवाह संपन्न हो गया।

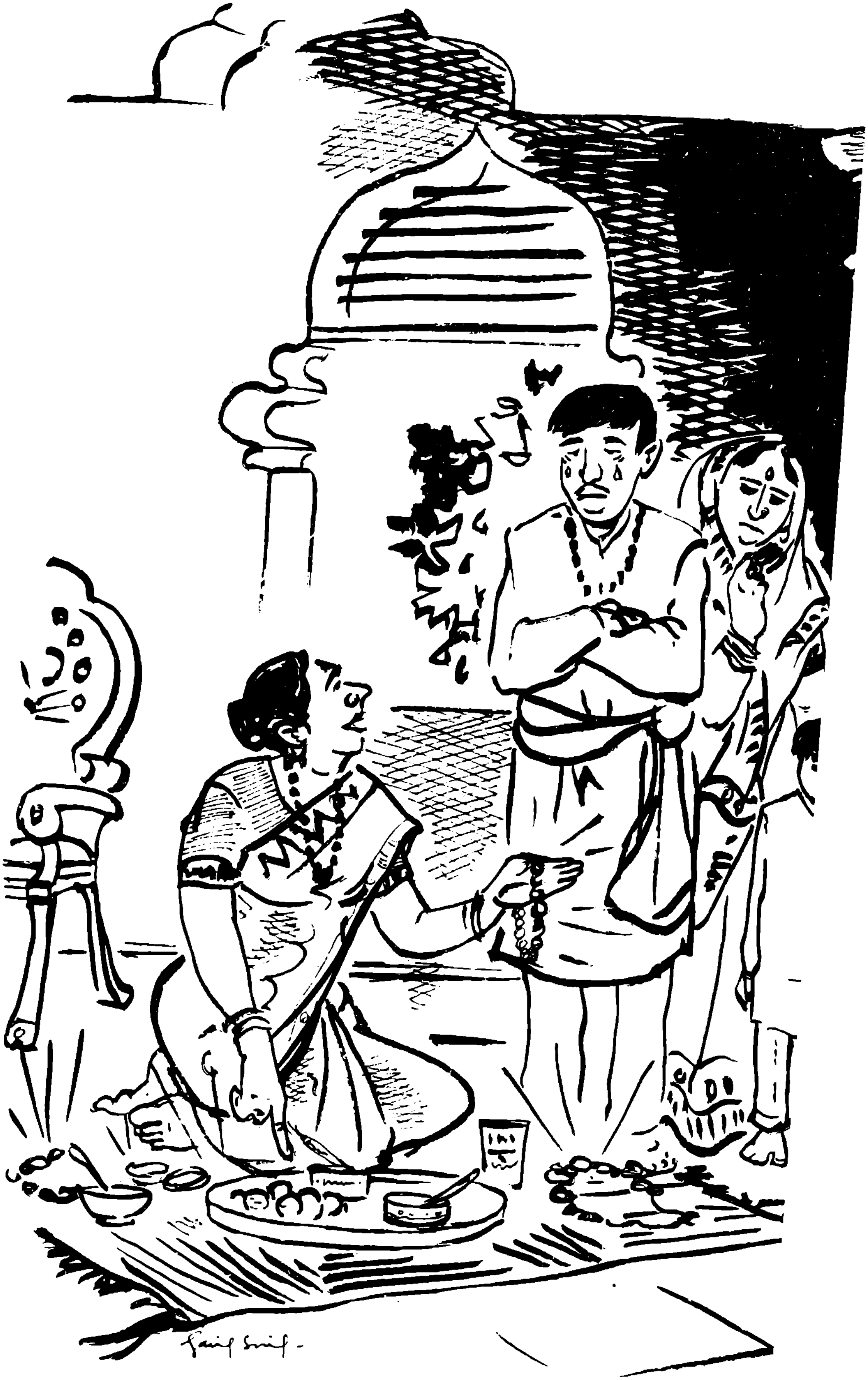
कुछ समय बाद मोहन का भी विवाह हो गया। अब उसके पास ढ़ेर सारी संपत्ति थी। धीरे-धीरे उसके स्वभाव में परिवर्तन आने लगा। वह घमंडी हो चला था। अपनी अमीरी के प्रदर्शन का कोई मौका वह नहीं चूकता।

मोहन में आया परिवर्तन देख सीता को बड़ा दुख होता। एक-दो बार उसने अपने भाई को समझाने की कोशिश की पर कोई लाभ नहीं हुआ।

समय बीतता गया। मोहन का व्यापार फलता-फूलता गया। रघुवीर का व्यापार भी सुचारू रूप से चल रहा था कि दुर्भाग्य ने उसे आ घेरा। एक बड़े सौदे में वह चूक गया और उसका सारा व्यापार ठप हो गया। वह कंगाल हो गया।

मोहन से सीता को बड़ी आशा थी। वह ज़रूर रघुवीर की मदद करेगा और रघुवीर का व्यापार फिर से चमक उठेगा, ऐसा उसने सोचा था। पर मोहन ने रघुवीर-सीता से बात करना भी बंद कर दिया।

कुछ दिनों बाद मोहन का लड़का हुआ। वह फूला न समाया। पुत्र के नामकरण संस्कार की जोरदार तैयारियां शुरू हो गईं।



हजारों निमंत्रण-पत्र बांटे गए। अपने सारे परिचितों, रिश्तेदारों को मोहन ने निमंत्रण दिया पर सीता व रघुवीर को जानबूझ कर उसने निमंत्रण नहीं दिया। कंगले बहनोई को निमंत्रण देकर लोगों को हसी उड़ाने का मौका वह नहीं देना चाहता था!

सीता को लग रहा था कि शायद मोहन निमंत्रण देना भूल गया हो। उसने रघुवीर से यह बात कही और कार्यक्रम में जाने की इच्छा प्रकट की। रघुवीर ने उसे समझाया पर जब वह रोने लगी तो कार्यक्रम में सम्मिलित होने के लिए उसने अनुमति दे दी। रघुवीर साथ में जाने के लिए तैयार नहीं था। सीता अकेले ही भाई के घर चली गई।

जब वह मोहन की हवेली पर पहुंची तो उसका स्वागत करने के लिए कोई आगे नहीं आया। सारे कार्यक्रम जोरदार ढंग से होते रहे पर सीता की ओर किसी ने भी ध्यान नहीं दिया। मोहन ने तो उसकी ओर देखा तक नहीं। जब सीता ने अपने भतीजे के लिए भेंट-वस्तुएं देनी चाही तो मोहन की पत्नी ने नाक-भौं सिकोड़ कर इन वस्तुओं को लेने से इन्कार कर दिया।

सीता अपमानित हो कर भूखी-प्यासी लौट आई। रघुवीर उसे देखते ही सारी बात समझ गया पर बोला कुछ भी नहीं। सीता बुझे मन से रोजमर्रा के कामकाज में लग गई।

दिन बीतते गए। रघुवीर ने हिम्मत नहीं हारी थी। वह बराबर मेहनत करता गया। इसका फल भी उसे मिला। धीरे-धीरे इसका व्यापार चमक उठा। उसने अब पहले से भी ज्यादा धन अर्जित कर लिया था।

रघुवीर की सफलता देख कर मोहन ने सोचा कि यदि रघुवीर से फिर से मैत्री कर ली जाए तो व्यापार में वह बड़ा लाभ कमा सकेगा।

मोहन मौके की तलाश में था। कुछ ही दिनों में उसे यह मौका मिला। दशहरा आया तो उसने रघुवीर व सीता को अपने यहां भोजन का निमंत्रण दिया।

इस बार भी सीता अकेली ही गई। रघुवीर कोई बहाना बना कर टाल गया। सीता जब पालकी से उतरी तो उसका स्वागत करने के लिए मोहन खुद आगे बढ़ा। साथ में रघुवीर को न देख कर उसे निराशा हुई पर वह कुछ बोला नहीं।

सीता के आगे तरह-तरह के व्यंजन परोसे जाने लगे। ढ़ेर सारे व्यंजन परोस कर नौकर जब हटे तो मोहन ने सीता से भोजन शुरू करने का आग्रह किया। सीता मुस्कराई और उसने अपने गहने उतारने शुरू किए। मोहन व उसकी पत्नी आश्चर्य से देखते रहे। सारे गहने उतार कर रखने के बाद सीता एक-एक व्यंजन ले कर उन गहनों पर रखने लगी। आश्चर्य से मोहन ने पूछा, ''यह क्या कर रही हो, सीता?''

''कुछ नहीं भैया, इन गहनों को खिला रही हूं। वास्तव में तुमने मुझे नहीं बुलाया है बल्कि इन गहनों को बुलाया है। अगर तुम्हें मुझसे स्नेह होता तो तुम्हारे पुत्र के जन्म पर जब मैं बिना गहने पहने, गरीबी में आई थी, तब भी मेरी यही खातिरदारी होती। मुझे लगता है कि आज मेरी खातिर इसी लिए हो रही है कि मैंने कीमती गहने पहने हैं। इन स्वादिष्ट व्यंजनों को पाने के सच्चे हकदार तो ये गहने हैं।'' सीता ने कहा।

मोहन को अपनी भूल का एहसास हो गया। उसकी आंखों से पश्चाताप के आंसू बहने लगे। इन आंसुओं में उसका सारा घमंड बह गया। फिर से वह पहले वाला मोहन बन गया।

टीन-नू का सिक्का

बहुत पुरानी बात है। 'वान-चिंग' नाम का एक चीनी पुजारी अपने देश की यात्रा करके अपने गांव - 'ताओन-लिन' लौटा। गांववालों को वह अपनी यात्रा के किस्से नियमित रूप से सुनाता। गांववाले उसकी बातें बड़े चाव से सुनते, विशेषकर चीन में जो प्रसिद्ध बुद्ध मंदिर थे, उनके बारे में वे बड़ी उत्सुकता से पूछा करते। पुजारी की बातें सुन-सुनकर गांववालों की अपने गांव में भी एक बुद्ध मंदिर बनवाने की इच्छा हुई।

लेकिन प्रश्न था भगवान बुद्ध की मूर्ति का! गांव में मूर्ति ढालने वाले कलाकार तो थे, पर मूर्ति बनवाने का खर्च, मूर्ति के लिए बहुमूल्य धातु आदि निर्धन गांववाले कहां से लाते? इस समस्या को लेकर सारे गांववाले चिंतित हो उठे।

सब लोग मिलकर पुजारी बाबा के पास पहुंचे और उन्हें समस्या बताई। सुनकर बाबा बोले, ''एक उपाय है।''

''वह क्या, बाबा?'' कई लोग उत्सुकता से एक साथ पूछ बैठे।

''यहां गांव में हम पुजारियों के चार-छह घर हैं। हर घर का पुरुष सदस्य पूरे चीन में घूमकर पैसा, सोना-चांदी इकट्ठा कर सकता है। अपने देश में बहुत अमीर लोग हैं। मुझे विश्वास है कि वे इस काम के लिए धन अवश्य देंगे।''

बाबा का यह सुझाव सबको बहुत पसंद आया और सब उनके आदेशानुसार काम पर जुट गए।

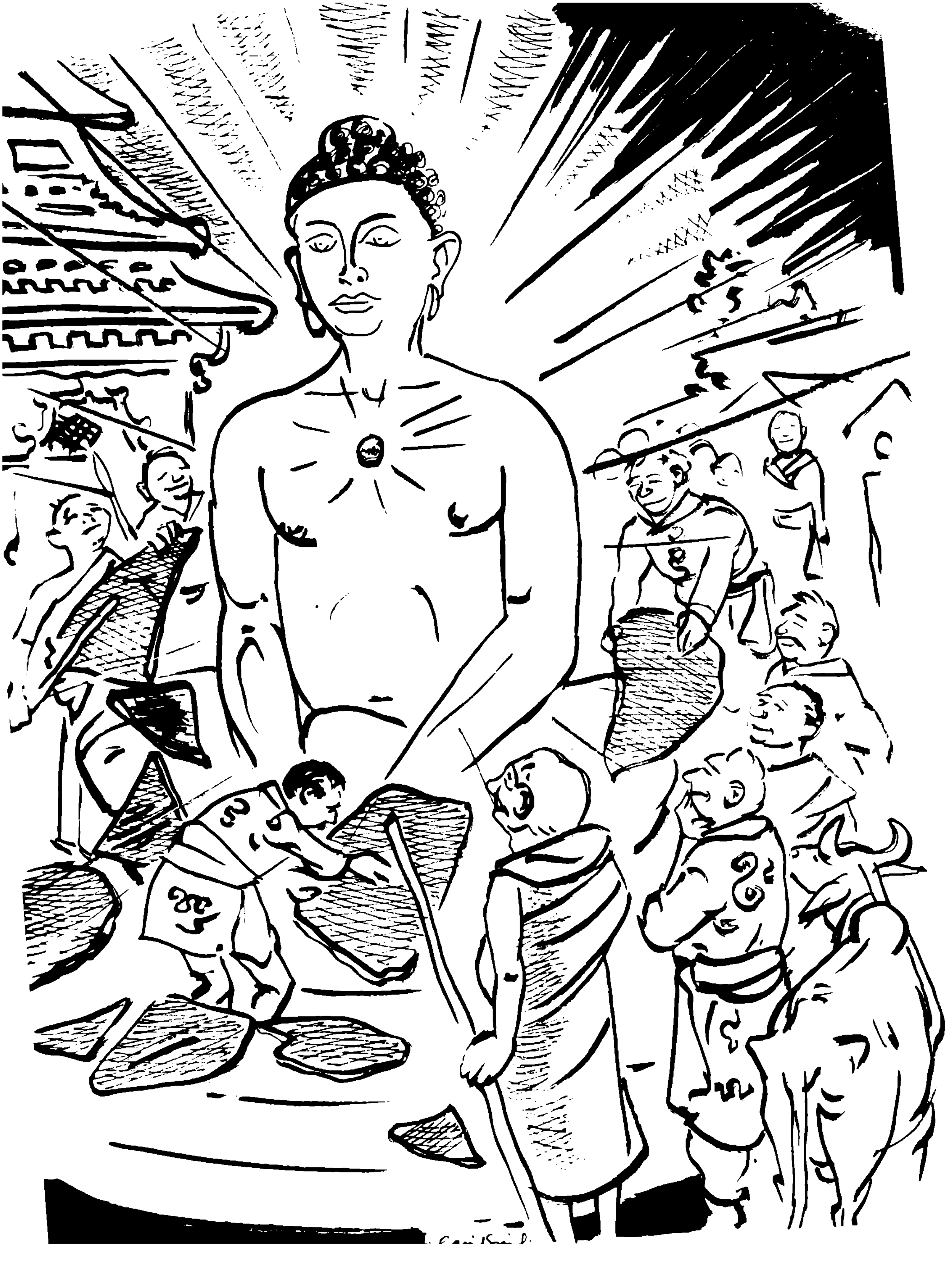
'ताओन-लिन' गांव से कुछ दूरी पर एक शहर में एक बहुत ही अमीर स्त्री रहती थी। उसकी सेवा-टहल के लिए बहुत सारी दासियां थीं। उनमें से एक दासी की 'टीन-नू' नामकी एक लड़की थी। टीन-नू छोटी थी,पर बहुत समझदार और मेहनती थी। सभी उसे प्यार करते थे।

एक बार टीन-नू को सड़क पर पड़ा हुआ एक पैसा मिला। चीन का वह सबसे छोटा सिक्का था। नू ने उसे उठाकर अपनी जेब में रख लिया। पैसा पाकर वह बहुत खुश हुई।

टीन-नू ने वह सिक्का अपनी मालकिन के बाग में एक पत्थर के नीचे छिपा दिया। जब भी समय मिलता, वह इस पैसे को निकालकर देखती और खुश हुआ करती। वह पैसा उसके लिए अनमोल था।

एक दिन की बात है। ताओन-लिन का एक पुजारी टीन-नू की मालकिन के घर आया। उसने मालकिन से बुद्ध भगवान की मूर्ति के लिए धन मांगा। नू वहीं पर कुछ काम कर रही थी। उसने पुजारी की बातें ध्यान से सुनीं और जब उसकी मालकिन ने पुजारी को ढेर-सारा सोना-चांदी-पैसा दिया तो उसे लगा कि बुद्ध भगवान की मूर्ति के लिए वह भी कुछ दे, लेकिन वह गरीब क्या दे सकती थी? वह सोचने लगी............

अचानक नू को बाग में छिपाए अपने पैसे की याद आई। वह दौड़कर बाग में पहुंची और पैसा ले आई, फिर घर से बाहर निकलते हुए पुजारी के हाथ में पैसा रखकर बोली, ''बुद्ध भगवान की मूर्ति बनवाने के लिए



मेरी ओर से यह छोटी-सी भेंट स्वीकार करें।''

वह पैसा देखकर पुजारी ने नाक-भौं सिकोड़ी और बोला, ''बेटी, इस पैसे का हम कोई उपयोग नहीं कर पाएंगे, इसे अपने पास ही रख लो।'' और उसने नू का पैसा लौटा दिया। पुजारी के व्यवहार से वह बहुत दुखी हुई। उसकी आंखों में आंसू आ गए। बहुत देर तक वह रोती रही।

समय बीतता गया। सभी पुजारी ताओन-लिन लौट चुके थे। काफी धन इकट्ठा हुआ था। बुद्ध भगवान की काफी बड़ी मूर्ति बन सकती थी।

मूर्ति ढालने की तैयारियां शुरू हो गईं। पुजारियों द्वारा इकट्ठा किया हुआ सोना-चांदी-ताबा पिघलने लगा। सारी धातु को अच्छी तरह पिघल जाने के बाद सांचे में ढाला गया। सब लोग उत्सुकता से मूर्ति देखने के लिए इकट्ठे हो गए। काफी देर हो गई। सांचे में डाली गईं धातुएं ठंडी होकर ठोस हो गईं। धीरे-से सांचा तोड़ा गया, लेकिन यह क्या?........भगवान बुद्ध की मूर्ति टूटी-फूटी-सी दिखाई दे रही थी। सभी आश्चर्यचकित रह गए।

मूर्ति को फिर से ढालने की कोशिश की गई। पर इस बार भी वही हाल रहा। लोग परेशान हो गए। पुजारी बाबा सोचने लगे—कुछ न कुछ जरूर हुआ है। किसी पर जरूर अन्याय हुआ है। जरूर किसी का दिल दुखा है......वरना ऐसा क्यों होता?

उन्होंने सभी पुजारियों को बुलाया। धन इकट्ठा करते समय जो-जो घटनाएं घटीं, उन्हें विस्तार से बताने को कहा। उनकी सभी बातें बाबा ने बड़े ध्यान से सुनीं। बीच-बीच में वे कुछ प्रश्न भी पूछते जाते। इस पूछताछ के दौरान जैसे ही उन्होंने एक पुजारी से टीन-नू की कहानी सुनी, तो वे कुछ उत्तेजित होकर बोले, ''अभी, इसी वक्त शहर चले जाओ और उस लड़की से वह पैसा मांग लाओ!''

पुजारी शहर गया। टीन-नू से मिलकर उसने सारी बात बताई और बोला, ''बेटी, बुद्ध भगवान की मूर्ति के लिए तुम्हारा सिक्का चाहिए। मुझे खेद है कि मैंने उस वक्त इंकार कर दिया था........क्या अब सिक्का दे सकोगी?''

''हां....हां....क्यों नहीं?'' नू बोली और दौड़कर पैसा ले आई। मुस्कुराते हुए उसने वह पैसा पुजारी के हाथ में थमा दिया।

पुजारी ने वह पैसा बाबा को दे दिया।

मूर्ति ढालने की तैयारियां फिर से शुरू हुईं, फिर से सांचा बनवाया गया, मूर्ति के लिए धातुएं फिर से पिघलने लगीं। इस बार पुजारी बाबा ने टीन-नू का वह सिक्का भी डाल दिया, जो पलभर में ही पिघल गया। पिघली हुआ धातुएं सांचे में डाली गईं.....कुछ देर बाद वे ठंडी हुई तो सांचे को तोड़ा गया। इस बार जैसे ही सांचे का आवरण हटा तो सब लोग खुशी से झूम उठे। सबके मुंह से यही निकला—सुंदर! बहुत सुंदर!

सचमुच ही भगवान बुद्ध की बहुत ही सुंदर मूर्ति बनी थी।

लेकिन साथ ही लोगों ने एक अजीब बात देखी। मूर्ति के वक्ष पर एक छोटा-सा चिह्न था, बिल्कुल टीन-नू के पैसे जितना......वह टीन-नू का ही सिक्का था!

आज भी चीन के ताओन-लिन के बुद्ध मंदिर में मूर्ति के वक्ष पर टीन-नू का वह सिक्का स्पष्ट रूप में दिखाई देता है!

पौधा और पेड़

बहुत पुरानी बात है। जापान के एक देहात में दो भाई रहते थे। बड़े भाई का नाम था ली तथा छोटे भाई का नाम युंग था। अपनी मेहनत से उन्होंने व्यापार में काफी संपत्ति अर्जित की थी। बड़ा भाई सादगीपसंद था। छोटा भाई मेहनती तो था पर वह खाने-पीने के मामले में बड़ा ही चटोरा था।

एक बार जापान में बड़ा भयंकर भूकंप आया। बहुत सारे लोग मारे गए। संपत्ति का भारी नुकसान हुआ। दोनों भाई भी भूकंप की चपेट में आ गए थे। उनकी जान तो बच गई पर सारी संपत्ति नष्ट हो गई। छोटा भाई अपने दुर्भाग्य पर रोने लगा पर बड़े ने संयम से काम लेते हुए उसे समझाया।

बड़े भाई ने सोच-विचार के बाद कुछ निश्चय किया तथा छोटे भाई को साथ लेकर चल पड़ा। अपनी दुकान के खंडहरों में काफी देर तक तलाश करने पर उन्हें कुछ येन (जापानी मुद्रा) मिले। इन सिक्कों को लेकर दोनों तोक्यो आए।

बड़े भाई ने छोटे भाई को आधे सिक्के दे दिए और उसे अपनी योजना समझाई। युंग ने ली की बात मानते हुए उसकी योजनानुसार काम करने का निश्चय किया।

इस योजनानुसार अब वे अलग होकर व्यापार करने वाले थे। बड़े भाई ने शहर के उत्तरी हिस्से में तथा छोटे भाई ने शहर के दक्षिणी हिस्से में अपना भाग्य आजमाने का फैसला किया। उन्होंने निश्चय किया कि जब तक वे पचास हजार येन नहीं कमाएंगे तब तक एक-दूसरे से नहीं मिलेंगे।

बड़े भाई ने छोटे भाई की सफलता की कामना करते हुए उसे गले से लगा लिया। विदा होते समय ली ने कहा, ''युंग, मुझे विश्वास है तुम अपनी मेहनत से बहुत जल्दी एक सफल व्यापारी बनोगे।''

युंग मुस्कुराया।

''मेहनत के साथ-साथ किफायत भी बहुत ज़रूरी है, यह कभी मत भूलना।'' ली बोला।

दोनों भाई अपनी राह चल पड़े।

ली ने शहर के उत्तर की ओर अपना व्यापार शुरू किया। अपनी मेहनत व लगन से उसने अपने व्यापार को खूब चमकाया। ली बड़ा सादगी से रहता। भोजन में वह केवल चावल, नमक व मछली लिया करता। स्वादिष्ट चीजें खाने की इच्छा उसे होती ज़रूर पर इन चीजों पर खर्च करने के बजाय, वह इन पैसों का उपयोग व्यापार बढ़ाने में किया करता।

कुछ ही दिनों में वह एक सफल व्यापारी के रूप में जाना जाने लगा। उसने अब काफी संपत्ति अर्जित

कर ली थी। जब उसने देखा कि व्यापार को सुचारू ढंग से चालू रखते हुए वह ठाठ-बाट से रह सकता है तो उसने एक अच्छा सा मकान बनवा लिया।

ली को अपने छोटे भाई की बहुत याद आती। वह सोचा करता कि युंग काफी धनवान हो गया होगा। व्यापार में व्यस्त होने के कारण उसे समय नहीं मिलता होगा।

जबकि स्थिति एकदम उल्टी थी। युंग ने बड़ी लगन से व्यापार की शुरूआत की। सादगी भरा जीवन उसने अपना लिया। लेकिन कुछ ही दिनों में चावल, नमक व मछली वाले भोजन से उसे अरुचि हो गई। अपने चटोरेपन को दबाने की उसने भरसक कोशिश की पर जल्द ही वह ऊब गया।

स्वादिष्ट भोजन का लालच उसे ले डूबा। व्यापार में वह जो कुछ भी कमाता उसका बहुत सारा हिस्सा स्वादिष्ट चीजों को खरीदने में खर्च हो जाता। उसका व्यापार फल-फूल नहीं सका। जल्द ही उसका व्यापार ठप्प हो गया।

बहुत दिनों तक वह अपने भाई से जाकर मिलने की हिम्मत नहीं जुटा पाया।

एक दिन भाई से मिलने की इच्छा ने जोर मारा और वह ली के घर पहुंच गया।

युंग की खस्ता हालत देखकर ली सब कुछ समझ गया। बड़ी प्रसन्नता से उसने अपने छोटे भाई का स्वागत किया पर उसने युंग से उसके व्यापार के बारे में कुछ भी नहीं पूछा।

युंग अब ली के घर में रहने लगा। ली उसे भोजन में केवल भात, नमक तथा मछली ही दिया करता। कुछ दिनों तक तो युंग चुप ही रहा।

एक दिन भोजन के समय युंग ने बड़े भाई से कहा, ''भैया, भात में इमली के पत्ते मिलाकर खाने की बड़ी इच्छा हो रही है।''

''ठीक है।'' ली बोला और वह युंग को अपने बाग में ले गया। बाग में इमली का एक छोटा सा पाधा था। उस पौधे की ओर इंगित करते हुए ली बोला, ''तुम इस पौधे से पत्ते तोड़कर अपना काम चला सकते हो।

अब युंग उस पौधे से कुछ पत्तियां तोड़कर उनका उपयोग भोजन में करने लगा। जल्दी ही उस पौधे की सारी पत्तियां खत्म हो गई। सारी पत्तियां समाप्त होने से पौधा सूख गया।

युंग बड़ा परेशान हो गया। उसने अपनी समस्या बड़े भाई के सम्मुख रखी।

ली इसी दिन का इंतजार कर रहा था। वह युंग को लेकर बाग के एक कोने में इमली के एक बड़े पेड़ के पास पहुंचा। कुछ पल सोचने के बाद वह युंग से बोला, ''भोजन में केवल नमक, भात व मछली का प्रयोग करने से भोजन से अरुचि हो जाती है, यह मुझे भी पता है। मैं तुम्हें हर प्रकार के स्वादिष्ट व्यंजन भोजन में दे सकता हूं, पर मेरी एक शर्त है।''

''वह क्या भैया?'' युंग ने पूछा।

''फिलहाल भोजन में तुम्हें केवल भात, मछली व नमक ही मिलेगा। इसके साथ तुम इस पेड़ की पत्तियों



का इस्तेमाल कर सकते हो। जिस दिन इस पेड़ की सारी पत्तियां समाप्त हो जाएंगी, उस दिन से तुम्हें सुस्वादु भोजन मिला करेगा।''

''बहुत अच्छा, भैया,'' युंग अपनी खुशी छिपाता हुआ बोला।

अब वह रोजाना बहुत सारी पत्तियां तोड़कर भात में मिलाया करता। कुछ दिन बीत गए पर पेड़ की पत्तियां कम होने का नाम ही नहीं ले रही थी।

वह समझ गया कि इस तरह से तो सारी पत्तियां खा पाना असंभव ही है। वह बड़ा निराश हुआ। अपनी निराशा वह ली से नहीं छिपा सका। उसने अपनी विवशता ली को बता दी।

ली बोला, ''तुमने इमली के छोटे से पौधे की सारी पत्तियां तो जल्दी ही खत्म कर डालीं जबकि इस पेड़ की पत्तियां खत्म करना तुम्हारे बस की बात नहीं है। व्यापार का भी यही नियम है कि जब तक छोटे से व्यापार में मिले धन को अनाप-शनाप खर्च किया जाएगा तो वह कभी नहीं पनप सकेगा। प्रारंभ में मिले लाभ का उपयोग यदि व्यापार बढ़ाने में किया जाएगा तो यह छोटा सा पौधा वृक्ष बन पाएगा। और तुम तो देख ही चुके हो कि पेड़ की काफी पत्तियां तोड़ी जाने के बाद भी उसका कुछ नहीं बिगड़ा। एक बार व्यापार अच्छी तरह पनप जाने के बाद तुम खूब ऐश-आराम भी करो तो न तो व्यापार पर बुरा असर पड़ेगा, न ही धन खत्म होगा।''

बड़े भाई की बात सुन कर युंग की आंखें खुल गई। उसने नये निश्चय के साथ फिर से अपना व्यापार शुरू किया और कुछ ही दिनों में एक सफल व्यापारी बन गया।

चित्रकार की चतुराई

एक चित्रकार था। बहुत ही सुंदर चित्र बनाता था वह। जो भी उसके चित्र देखता, उसका प्रशंसक बन जाता। उसकी ख्याति दूर-दूर तक फैली थी। उसके हाथों बने चित्र घर में टांगना बडे गर्व की बात समझी जाती।

एक सेठ को इस चित्रकार द्वारा अपना चित्र बनवाने की इच्छा हुई। चित्रकार का पारिश्रमिक एक हजार वौन (कोरिया की मुद्रा, उत्तर कोरिया तथा दक्षिण कोरिया दोनों की मुद्रा वौन है पर दोनों का अंतर्राष्ट्रीय मूल्य अलग-अलग है।) तय हुआ। चित्रकार ने कुछ ही दिनों में चित्र बना डाला। बड़े ही मनोयोग से उसने यह चित्र बनाया था। सेठ ने अपना चित्र देखा तो मन-ही-मन बड़ा खुश हुआ पर जब पैसों के बारे में उसने सोचा तो चित्र के लिए एक हजार वौन देना उसे अखरने लगा। सेठ की नीयत बदल गई थी। अपनी खुशी छिपाता हुआ वह मक्कारी से बोला, ''इसे तुम मेरा चित्र कहते हो? मेरी आंखें, नाक क्या इतनी भौंड़ी है? तुमने तो हद कर दी पर मैं तुम्हारा नुकसान नहीं करना चाहता। कैनवास, रंग वगैरह पर तुम्हारे सौ-दो सौ तो खर्च हुए होंगे ही। मैं तुम्हें तीन सौ वौन दूंगा। अगर तुम चाहो तो अभी तुम्हें पैसे मिल जाएंगे।''

सेठ ने सोचा, चित्रकार चित्र को लेकर क्या करेगा? उसके लिए तो चित्र की कोई उपयोगिता है ही नहीं। उसे मजबूर होकर यह चित्र बेचना ही पड़ेगा। अपनी युक्ति पर वह फूला न समाया।

चित्रकार एक क्षण के लिए तो हतप्रभ रह गया। सेठ के इस व्यवहार से वह बड़ा दुखी हुआ। उसके स्वाभिमान को ठेस पहुंची थी। उसने सेठ को सबक सिखाने की ठान ली।

कुछ सोच का वह बोला, ''मुझे इस बात का बेहद अफसोस है कि मैं आपकी अपेक्षानुसार चित्र नहीं बना पाया। पर क्या आपको पूरा विश्वास है कि यह चित्र आपका नहीं है?''

''हां, बिल्कुल।'' सेठ ने जोर देकर कहा। खुद चित्रकार ने ही चित्र ठीक ढंग से नहीं बना पाने की बात कही थी, अतः वह कम दामों में चित्र अवश्य ही दे देगा, ऐसा सेठ को विश्वास हो चला था।

''क्या आप मुझे लिखकर देंगे कि यह चित्र आपका नहीं है?'' चित्रकार ने पूछा।

''यह लो, अभी लिखकर देता हूं।'' सेठ ने एक कागज पर 'यह चित्र मेरा नहीं है' ऐसा लिखकर वह कागज चित्रकार को थमा दिया। चित्रकार ने कागज अपनी जेब में रखा और बोला, ''सेठजी, जो चित्र आपको पसंद ही नहीं आया उसके लिए आपके पैसे खर्च हों, यह उचित नहीं लगता।''

और चित्रकार चित्र लेकर चला गया।

दूसरे ही दिन जब सेठ की पत्नी बाजार से लौटी तो गुस्से में सेठ से बोली, ''क्या बेहूदगी है यह?''

''ऐं? क्या हुआ?'' सेठ ने आश्चर्य से पूछा।



''मुझ से क्या पूछते हो? खुद ही चले जाओ चौराहे पर। देखो, वहां क्या हो रहा है?''

सेठ घर से निकल पड़ा। चौराहे पर काफी भीड़ इकट्ठा हुई थी। वहां पर लगे एक चित्र को देख कर लोग जी खोल कर हंस रहे थे। सेठ की उत्सुकता बढ़ी। वह जल्दी-जल्दी चल कर चित्र के समीप पहुंचा। लोगों ने सेठ को देखा तो और भी जोरों से ठहाके लगाने लगे। जिस चित्र को देख कर लोग हंस रहे थे, वह चित्रकार द्वारा बनाया गया सेठ का ही चित्र था। चित्र के नीचे लिखा था, 'शहर का सब से बड़ा मूर्ख।'

सेठ को बड़ा गुस्सा आया। वह सीधे चित्रकार के घर गया। चित्रकार को देखते ही वह बिफर पड़ा, ''क्या बदतमीजी है यह?''

''कैसी बदतमीजी, सेठ जी?'' चित्रकार ने भोलेपन से पूछा।

''मेरा चित्र चौराहे पर टांग कर मुझ से ही पूछते हो?'' सेठ चिल्ला पड़ा।

''आपका चित्र? पर आपने तो कहा था कि वह चित्र आपका है ही नहीं और खुद आपने ही ऐसा लिखकर भी दिया था।''चित्रकार बोला।

सेठ की बोलती बंद हो गई। बड़ा ही परेशान हो गया वह। कुछ देर चुप रहने के बाद वह बोला, ''अच्छा, मैं तुम्हें हजार वौन दे दूंगा। वह चित्र मुझे दे दो।''

''पर वह चित्र तो आपका नहीं है। उसे लेकर आप क्या करेंगे?'' चित्रकार ने पूछा,

''यह सोचना तुम्हारा काम नहीं है। मुझे वह चित्र चाहिए और उसकी कीमत चुकाने के लिए मैं तैयार हूं, बस,'' अपना गुस्सा दबाकर सेठ बोला।

''ठीक है, पर सेठजी, अब उस चित्र का मूल्य दस हजार वौन है और यदि इतनी कीमत आप नहीं देना चाहते तो समझ लीजिए कि चित्र मुझे बेचना नहीं है।'' चित्रकार दृढ़ता से बोला।

और सेठ को पूरे दस हजार वौन देने पड़े!

लालच बुरी बला

हसन बहुत ही लालची इन्सान था। दिन-रात उस पर सोना इकट्ठा करने का धुन सवार रहती। इस चक्कर में वह इतना कंजूस हो गया था कि ज़रूरत का चीजें खरीदना भी उसे अखरता। खाने-पीने की चीजों पर खर्च करना भी उसे अच्छा नहीं लगता। उसकी पत्नी फातिमा भी सोने की भूखी थी। दोनों हरदम सोना इकट्ठा करने की तरकीबें सोचा करते।

उन दिनों बगदाद में बहुत ही न्यायप्रिय खलीफा का राज्य था। उनका नाम था हारून-अल-रशीद। हसन उनके यहां नौकर था। वेतन के रूप में उसे जो भी पैसे मिलते, उनमें से ज्यादा-से-ज्यादा पैसे बचाकर सोना खरीद कर वह खुश हुआ करता। धीरे-धीरे उसके पास काफी अशर्फियां इकट्ठी हो गईं। सोने की इन अशर्फियां को गिनते रहना उसका प्रिय शौक था।

कुछ ही दिनों में उसका लालच इस हद तक बढ़ गया कि उसकी बुद्धि धन बढ़ाने के लिए बुरी तरकीबें सोचने में लग गई।

एक दिन फातिमा ने एक अजीब तरकीब ढूंढ़ निकाली। उसका तरकीब सुनकर हसन बड़ा खुश हुआ।

दूसरे ही दिन अपनी तरकीब आजमाने फातिमा बाजार गई और आंसू बहाते हुए एक दुकानदार से बोली, ''बड़ा अन्याय हो गया! खलीफा ने मेरे पति पर झूठा इल्जाम लगाकर जबरन जेल में ठूंस दिया। मुझ बेसहारा पर रहम कीजिए......''

दुकानदार खलीफा की न्यायप्रियता से भलीभांति परिचित था। खलीफा अन्याय नहीं कर सकते, ऐसा उसका विश्वास था पर फातिमा के आंसुओं ने उसका दिल पिघला दिया। उसने फातिमा को मुफ्त में अनाज दे दिया।

फिर तो रोज ही अलग-अलग दुकानदारों के सामने फातिमा अपना वही दुखड़ा सुनाकर मुफ्त में अनाज बटोर कर लाने लगी।

अपने-आप को दूसरों की नजरों से छिपाने के लिए हसन सूरज निकलने से पहले घर से निकलता और रात गए लौटता।

दुकानदारों ने कुछ दिनों तक तो अनाज दिया पर ऐसा कितने दिनों तक चलता? एक दिन सारे दुकानदार इकट्ठा हुए और उन्होंने सोच-विचार कर एक योजना बनाई। अपनी योजना को फातिमा के सम्मुख रखते हुए वे बोले, ''अपने खलीफा बहुत ही दयालु तथा न्यायप्रिय हैं। हम सब अगर उनके पास जा कर दया की याचना करेंगे तो वे हसन को जरूर छोड़ देंगे।''

दुकानदारों की बातें सुनकर फातिमा घबरा गई और और हाथ जोड़कर उनसे बोली, ''नहीं....नहीं.... ऐसा हरगिज मत करना। हो सकता है हमारे जाने से खलीफा और भी नाराज हो जाएं तथा मेरे पति को और भी कठोर दंड दें।''



''तो फिर तुम अपने रिश्तेदारों से मदद मांगो। अब हम तुम्हारी मदद नहीं कर पाएंगे।'' दुकानदारों ने अपना निर्णय सुनाया। मुफ्त में अनाज पाने का यह रास्ता अब बंद हो चुका था।

अब उनका शैतानी दिमाग नई जुगत में लग गया। धन बढ़ाने का अन्य कोई उपाय न देखकर हसन ने राजमहल में चोरी करने का निश्चय किया।

हसन हर रोज कोई-न-कोई चीज राजमहल से उड़ा लाता। इन चीजों को बेच कर वह अशर्फियां बढ़ाने में लग गया। लेकिन जल्दी ही उसका पाप खुल कर सामने आया। एक दिन वह चोरी करता हुआ पकड़ा गया। उसे खलीफा के सम्मुख पेश किया गया। हसन ने सारी बातें उगल दीं।

खलीफा बहुत नाराज हुए पर संयम से काम लेते हुए बोले, ''राजमहल में चोरी तथा दुकानदारों को ठगने के जुर्म में तुम्हें फांसी पर लटकाया जाना चाहिए पर मैं ऐसा नहीं करूंगा।''

कुछ देर के मौन के बाद खलीफा बोले, ''अपनी संपत्ति को तुम अपने पास ही रख सकते हो, लेकिन तुम्हें इस संपत्ति को थैलों में भर कर अपने गले में हरदम लटकाए रहना पड़ेगा। और एक बात अच्छी तरह समझ लो कि इन अशर्फियों के बदले में कोई भी तुम्हें अनाज, कपड़ा या अन्य वस्तुएं नहीं देगा.....अब तुम जा सकते हो।''

खलीफा की आज्ञानुसार अशर्फियों को दो थैलों में भरा गया और इन थैलों को हसन तथा फातिमा के गले में लटका दिया गया। साथ ही— 'हसन व फातिमा से अशर्फियां लेकर उन्हें वस्तुएं देने वाले को दंडित किया जाएगा'—ऐसा शाही फरमान जारी कर दिया गया।

पहले तो हसन तथा फातिमा जान व धन बच जाने से बहुत खुश हुए पर जल्दी ही उनकी यह खुशी काफूर हो गई। अशर्फियों के भारी बोझ को गले में लटकाकर घर पहुंचने तक दोनों परेशान हो गए। रास्ते में जो भी उन्हें देखता, इन लालचियों की हालत देखकर हंसने लग जाता।

घर पहुंचते ही उन्हें याद आया कि घर में तो खाने के लिए कुछ भी नहीं है। पास में धन होने के बावजूद उन्हें भूखों रहना पड़ा। दो-चार दिन तो उन्होंने किसी तरह काट लिए पर जब भूख सहना मुश्किल हो गया तो दोनों घर से निकल पड़े। गले में अशर्फियों का बोझ लटकाए वे सीधे राजमहल पहुंचे। दोनों पश्चाताप के आंसू बहाते हुए खलीफा के पैरों पर गिर पड़े।

खलीफा ने तत्काल अपने वज़ीर को आज्ञा दी, ''इन अशर्फियों में से आधी अशर्फियां उन दुकानदारों में बांटी जाएं जिन्हें हसन और उसकी पत्नी ने धोखा दिया है। बाकी अशर्फियों को राजमहल में हुई चोरी के दंडस्वरूप खजाने में जमा कर दिया जाए........साथ ही हसन को फिर से राजमहल के नौकर के रूप में नियुक्त किया जाए।''

अपना निर्णय सुनाने के बाद खलीफा हसन से बोले, ''एक बात हमेशा याद रखो, जिस धन का हम उपयोग न कर पाएं, वह बेकार ही है।''



सोया नसीब

एक गांव में मकसूद नाम का किसान था। वह बड़ा मेहनती और भला था। अपनी मेहनत से उसने खूब सारा धन इकट्ठा कर रखा था। धनवान होने के बावजूद उसमें घमंड जरा भी नहीं था। दूसरों की मदद करने के लिए वह हरदम तैयार रहता।

उसका पड़ोसी अब्दुल कामचोर व आलसी था। घर में पड़े-पड़े वह शेखचिल्ली की तरह सपने देखा करता। काम से जी चुराने के कारण उसे बड़ी बुरी हालत में दिन गुजारने पड़ते। मकसूद को फलता-फूलता देख उसे बड़ी ईर्ष्या होती। एक रात मकसूद के घर में चोरी करने के इरादे से वह दीवार फांद कर उसके घर में घुसा। एक कमरे में रखी तिजोरी देख वह खुशी-खुशी तिजोरी की ओर बढ़ा ही था कि एक कड़कदार आवाज गूंजी, ''खबरदार! तिजोरी को हाथ मत लगाना।''

आवाज सुनते ही अब्दुल घबरा गया, लेकिन जल्दी ही उसके समझ में आ गया कि यह आवाज मकसूद की नहीं है। हिम्मत से काम लेते हुए उसने पूछा, ''लेकिन तुम हो कौन?''

''मैं? मैं मकसूद का नसीब हूं। उसके धन की रक्षा करना मेरा काम है।'' आवाज गूंजी।

''ऐं? मकसूद का नसीब?'' अब्दुल बोला, ''मेरा नसीब कहां खोया है, क्या मुझे बता सकोगे? मै तुम्हारा उपकार कभी नहीं भूलूंगा।''

आवाज फिर गूंजने लगी, ''तेरा नसीब सुलेमान के पहाड़ पर सोया पड़ा है। जाकर उसे जगा। उसके जागते ही तू अपार धन का स्वामी बन जाएगा।''

अब्दुल अपने घर लौट गया। सुबह होते ही वह अपने नसीब को जगाने चल पड़ा। सुलेमान का पहाड़ बहुत दूर था। रास्ता भी बड़ा दुर्गम था।

चलते-चलते रास्ते में उसकी मुलाकात एक शेर से हुई। शेर को देखते ही अब्दुल ने घुटने टेक दिए और हाथ जोड़ कर बोला, ''मैं अपने सोए नसीब को जगाने जा रहा हूं, मुझे मत खाना।''

''ठीक है। लेकिन तुम्हें मेरा एक काम करना होगा। अपने नसीब से पूछना कि इतना खाने के बावजूद मेरी भूख शांत क्यों नही होती? उसके लिए मुझे क्या करना होगा?'' शेर बोला,

शेर को उसका काम करने का वचन दे कर वह आगे बढ़ा। कुछ दिनों बाद वह एक बहुत ही शानदार शहर में पहुंचा। यह शहर एक राज्य की राजधानी थी। कोई पराया आदमी इस शहर में आता तो उसे राजा के सम्मुख उपस्थित किया जाता। अब्दुल को भी राजा के पास ले जाया गया। अब्दुल ने अपनी सारी कहानी सुनाई। उसकी कहानी सुनने के बाद राजा बोला, ''अपने नसीब से यह भी पूछना कि राज्य की भलाई के लिए मैं दिन-रात मेहनत करता हूं पर कोई लाभ क्यों नही होता?''

राजा की बात सुनने के बाद अब्दुल ने उसे भी उसका काम करने का आश्वासन दिया और आगे बढ़ चला। कुछ ही दिनों में वह सुलेमान पहाड़ की तलहटी में पहुंचा। पहाड़ को देखकर उसका उत्साह दूना हो



गया। वह झटपट पहाड़ पर चढ़ने लगा। किसी तरह वह पहाड़ की चोटी पर पहुंचा। पहाड़ की चोटी पर एक विशालकाय आदमी सोया पड़ा था। अब्दुल उसे जगाते हुए बोला, ''कब से सोए पड़े हो। उठो भाई!''

वह आदमी जाग गया और अब्दुल से बोला, ''मैं जाग गया हूं। अब नहीं सोऊंगा। आप निश्चिंत रहिए।''

अब्दुल ने अपने नसीब से शेर व राजा की समस्या का हल पूछा। उत्तर मिलने पर नसीब को जागते रहने के लिए कह कर वह पहाड़ से नीचे उतरा।

लौटते हुए वह राजा से जा कर मिला। राजा ने पूछा, ''नसीब से भेंट हुई?''

''जी हां।'' अब्दुल खुश होकर बोला।

''मेरे प्रश्न का क्या उत्तर दिया उसने?'' राजा ने अधीर हो कर पूछा।

''यह केवल एकांत में बताने की बात है, सब के सामने नहीं।'' अब्दुल बोला,

राजा ने सभी लोगों को वहां से चले जाने की आज्ञा दी। सब लोगों के चले जाने पर अब्दुल फुसफुसाते हुए बोला, ''हुजूर, मेरे नसीब ने बतलाया कि आप एक स्त्री हैं और जहां पर स्त्री पुरुष के वेश में राज करती है, उस राज्य की प्रगति नहीं हो सकती।''

यह सुन कर राजा बेचैन हो गया। कुछ देर सोचने के बाद वह बोला, ''मेरा रहस्य अब तुम्हें मालूम हो ही गया है। तुम मुझसे विवाह कर इस राज्य के स्वामी बन जाओ।''

अब्दुल ने सोचा—'राजा बन जाने के बाद सारे राज्य की जिम्मेदारी का बोझ सर पर आ पड़ेगा, अतः उस आलसी ने कहा, ''नहीं हुजूर, अब मुझे किसी चीज की ज़रूरत नहीं है। मेरा नसीब जाग गया है।''

और अब्दुल वहां से निकल पड़ा। रास्ते में वह सोच रहा था,.....'अब मेरा नसीब जाग गया है। मुझे बिस्तर पर पड़े-पड़े ही सब कुछ मिल जाएगा....

कुछ ही दिनों में उसकी मुलाकात शेर से हुई। शेर ने पूछा, ''क्या तुम्हारा उद्देश्य सफल हुआ?''

अब्दुल ने उत्तर में सारी बातें बतलाई। राजा से हुई मुलाकात की विस्तार से वर्णन करने के बाद वह बोला, ''स्त्री के वेश में जो राजा था, उसने मुझ से विवाह करने की इच्छा प्रकट करते हुए राजपाट देना चाहा पर मैंने वह ठुकरा दिया। अब मेरा नसीब जाग गया है, मुझे अब कुछ करने की जरूरत ही क्या है?''

''अच्छा!'' शेर मुस्करा कर बोला, ''अब मेरे प्रश्न का क्या उत्तर मिला, यह बतलाओ।''

''अरे हां। मैं तो भूल ही गया था,'' अब्दुल बोला, ''तुम्हारी समस्या का बहुत ही सरल समाधान है। उसने कहा है कि तुम किसी मूर्ख आदमी को मार कर खा जाओगे तो तुम्हारी शिकायत दूर हो जाएगी।''

यह सुन कर शेर ने एक क्षण सोचा और अगले ही क्षण वह खुशी से चिल्लाया, ''तुमसे बड़ा मूर्ख तो मैंने आज तक देखा नहीं।''

और शेर अब्दुल पर झपट पड़ा। इस प्रकार अब्दुल का नसीब सदा के लिए सो गया!



बातूनी बीवी

बहुत पुरानी बात है। काराचारोवा गांव में एक शिकारी रहता था। उसका नाम था इवान। इवान की पत्नी तात्याना बहुत ही वाचाल और भोली स्त्री थी। कोई भी बात उसके पेट में नही पचती। जैसे ही उसे किसी बात का पता चलता, सारे गांव में वह बात फैल जाती।

एक दिन इवान शिकार के लिए घर से निकला। जंगल में पहुंचने पर उसने एक उपयुक्त जगह तलाश कर जानवर फंसाने के लिए गड्ढा खोदना शुरू किया। कुछ देर बाद उसे मिट्टी में दो-चार सोने के सिक्के दिखाई दिए। अब उसके हाथ तेजी से चलने लगे। देखते-ही-देखते चमचमाते हुए सिक्कों से भरा एक बड़ा मटका उसके हाथ लगा। वह खुशी से झूम उठा। पर अगले ही क्षण उसकी खुशी काफूर हो गई। वह सोचने लगा, यदि इस बात का पता पत्नी को चला तो बहुत जल्दी सारा गांव यह बात जान जाएगा। जमींदार को भी इस बात का पता चलने में देर नहीं लगेगी और सारा धन हाथ से जाता रहेगा।

वहीं पर बैठकर वह कुछ सोचने लगा। काफी सोच-विचार के बाद उसे एक युक्ति सूझी। उसने सारा गड्ढा मिट्टी से पाट दिया और वहां पर एक टहनी गाड़ कर लौट पड़ा। लौटते हुए वह नदी पर गया। पिछली रात उसने नदी में जो जाल डाला था, उसमें एक बड़ी मछली फंसी थी। उसने जाल से मछली निकाली और उसे साथ लेकर आगे बढ़ा। एक जगह उसके लगाए फंदे में एक खरगोश फंसा हुआ था। उसने खरगोश को फंदे से अलग किया और उस फंदे में मछली को फंसा दिया। फिर वह नदी की ओर लौटा, नदी में डाला हुआ जाल निकालकर उसमें खरगोश को फंसा कर उसने फिर से वह जाल नदी में छोड़ दिया। फिर वह बाजार गया। बाजार से उसने कुछ पावरोटी खरीदीं। फिर से जंगल में जाकर उसने कुछ पेड़ों पर पावरोटी लटका दी और घर लौट आया।

घर लौटकर वह पत्नी से बोला, ''भगवान ने बड़ी ही कृपा की हम पर। शिकार के लिए गडढा खोदते समय मुझे गुप्त धन दिखाई दिया। पर दिन के उजाले में वह धन लेकर आना खतरे से खाली नहीं था, अतः रात होते ही वह धन लाने हम चल पड़ेंगे। तुम तैयार रहना।''

रात होते ही पति-पत्नी धन लाने के लिए निकल पड़े। चांदनी रात में सारा जंगल बहुत ही सुहावना लग रहा था। चलते-चलते अचानक तात्याना की नजर पेड़ों पर गई। पेड़ों पर टंगी पावरोटी देखकर वह भौंचक्की रह गई। वह बोली, ''अरे! यहां तो पेड़ों पर पाव टंगे हैं!''

''यह कोई नई बात नहीं है,'' इवान बोला, ''हर पच्चीस वर्षों बाद इन पेड़ों पर फलों की जगह पावरोटी लगती हैं।''

कुछ देर चलते रहने के बाद इवान बोला, ''यहीं पर मैंने खरगोश फंसाने के लिए फंदा लगाया था। देखें, उसमें कुछ फंसा है या नहीं।''



दोनों फंदे के समीप पहुंचे। फंदे में फंसी मछली देख कर तात्याना बोली, ''यह क्या? फंदे में मछली?''

''यह जमीन पर चलने वाली मछली है।'' इवान बोला।

''बड़ी अजीब बात है। मैंने अपनी आंखों से नहीं देखा होता तो इस बात पर कभी विश्वास नहीं करती।''

चलते-चलते वे नदी के समीप पहुंचे। तात्याना बोली, ''तुमने यहीं कहीं जाल डाला होगा। चलो, वह भी देख लेते हैं।''

इवान भी यही चाहता था। दोनों जाल के समीप पहुंचे। इवान ने जाल खींचा। जाल में फंसा खरगोश देख कर तात्याना चिल्लाई, ''हे भगवान! बड़ा ही अजीब दिन है आज का! नदी में खरगोश? मैंने तो कभी सपने में भी नहीं सोचा था यह।''

''चिल्ला क्यों रही हो? क्या तुमने कभी पानी वाले खरगोश नहीं देखे?'' इवान डांट कर बोला।

''भगवान की सौगंध। मैंने ऐसी अजीब चीजें पहली बार देखी हैं।'' वह बोली।

इवान मन ही मन मुस्कराया।

अब इवान उसे गुप्त धन वाली जगह ले गया। वहां की मिट्टी हटा कर उन्होंने धन निकाल लिया। खुशी-खुशी दोनों घर लौटे।

घर लौटते ही इवान ने धन को छिपा दिया और पत्नी से बोला, ''तात्याना, इस धन के बारे में किसी को भी पता नहीं चलना चाहिए।''

तात्याना ने हामी भर दी।

दूसरे दिन तात्याना बड़ी देर से जागी। अलसाई हुई तात्याना जब कुंए पर पानी लेने पहुंची तो पड़ोसन ने पूछा, '' क्या बात है तात्याना? आज बड़ी देर कर दी तुमने। क्या तुम्हारी तबियत ठीक नहीं है?

''ऐसी कोई बात नहीं है।'' तात्याना बोली।

''फिर?''

''देखो, किसी से कहना मत....''

''मैं भला किसी से क्यों कहने लगी?'' पड़ोसन ने झट से कहा।

''बात यह है कि कल मेरे पति को जंगल में छिपे गुप्त धन का पता चला। उस धन को लाने के लिए हम दोनों रातभर मेहनत करते रहे, सो जल्दी नहीं उठ पायी मैं।'' तात्याना ने चहकते हुए कहा।

और कुछ ही देर में सारे गांव में यह बात फैल गई। लालची जमींदार को भी इस बात का पता चला। उसने इवान को पकड़कर लाने के लिए आदमी भेजे। कुछ देर बाद जमींदार के आदमियों ने इवान को जमींदार के सामने ला खड़ा किया। इवान को देखते ही जमींदार चिल्लाया, ''मेरे इलाके में मिला धन मुझ से ही छिपाकर रखने की तेरी हिम्मत कैसे हुई?''



''कैसा धन महाराज?'' इवान ने नम्रता से पूछा।

''खामोश!'' जमींदार का गुस्सा सातवें आसमान पर पहुंच गया। वह बोला, ''इवान, अगर अपनी जान प्यारी है तो सारा धन लाकर मुझे दे दो।''

''पर मेरे पास तो कोई धन है ही नहीं।'' इवान ने कहा।

जमींदार हंसा। बोला, ''भोला बनने की कोशिश मत करो। तुम्हारी पत्नी ने सारे गांव को गुप्त धन के बारे में बतला दिया है।''

''तात्याना ने? और आपने उस पर विश्वास भी कर लिया? हुजूर, यह औरत तो पूरी पागल है पागल। विश्वास न हो तो आप उसे यहां बुलवाकर उसकी परीक्षा ले लें।'' इवान ने कहा।

इवान की बात सुनकर जमींदार सोच में पड़ गया। उसने तात्याना को बुलवाकर उससे पूछा, ''तात्याना, सुना है तुम्हारे पति को गुप्तधन की प्राप्ति हुई है। क्या यह बात सच है?''

''ज......जी......'' तात्याना हकलाई।

''देखो डरो मत। कल रात तुमने जो भी देखा, विस्तार से बताओ।'' जमींदार नर्म स्वर में बोला।

''जी बात यह है कि कल मेरे पति ने मुझ से कहा कि उन्हें जंगल में गुप्त धन दिखाई दिया है और उसे लाने के लिए रात में चलना है। रात में हम दोनों निकल पड़े। चांदनी रात थी। हम दोनों कुछ दूर ही गए थे कि मैंने एक अजीब बात देखी। पेड़ों पर फलों की बजाय पावरोटी लटक रही थीं.....''

''पेड़ों पर पावरोटी?'' जमींदार ने आश्चर्य से पूछा।

''जी हां। और कुछ देर बाद जब हम मेरे पति द्वारा लगाए गये फंदे के करीब पहुंचे तो मैंने देखा कि उसमें एक मछली फंसी हुई है......''

जमींदार के माथे पर बल पड़ गए।

''फिर हम दोनों नदी पर पहुंचे। मेरे पति ने नदी में डाला हुआ जाल बाहर खींचा तो उसमें एक खरगोश फंसा हुआ था.....''

''बकबक बंद कर, पागल औरत। निकल जा यहां से।'' जमींदार दहाड़ा।

और इवान अपनी पत्नी को लेकर वहां से खुशी-खुशी चल पड़ा!

दा त्रांग का मोती

दा त्रांग नामक एक शिकारी था। सूर्योदय से पूर्व ही वह तीर-कमान ले कर शिकार के लिए निकल पड़ता। शिकार के लिए जंगल में जाते हुए उसे एक पुराने मंदिर के समीप से गुजरना पड़ता। उस मंदिर के खंडहर में दो चितकबरे सांप रहा करते। पहली बार उन्हें देख दा त्रांग घबराया पर जब उसने देखा कि सांपों की ओर से कोई खतरा नहीं है तो उसका डर जाता रहा। शिकार से लौटते समय वह नियमित रूप से उन सांपों को अपने शिकार का कुछ हिस्सा दिया करता। कुछ ही दिनों मे सांपों से उसकी गहरी मित्रता हो गई।

एक दिन दा त्रांग ने देखा कि एक बड़ा ही भयानक काला नाग उसके मित्र सांपों पर बार-बार हमला कर रहा है। उसने झट काले नाग पर तीर छोड़ा, पर दुर्भाग्य से निशाना चूक गया और काला नाग भाग निकला। चितकबरे सांपों में से एक मर चुका था और दूसरा काफी घायल हो गया था। दा त्रांग ने एक गडढ़ा खोदा और उसमें मृत सांप को दफना दिया। घायल सांप को वह घर ले आया। दा त्रांग व उसकी पत्नी ने घायल सांप की खूब सेवा की। कुछ ही दिनों में वह सांप स्वस्थ हो गया।

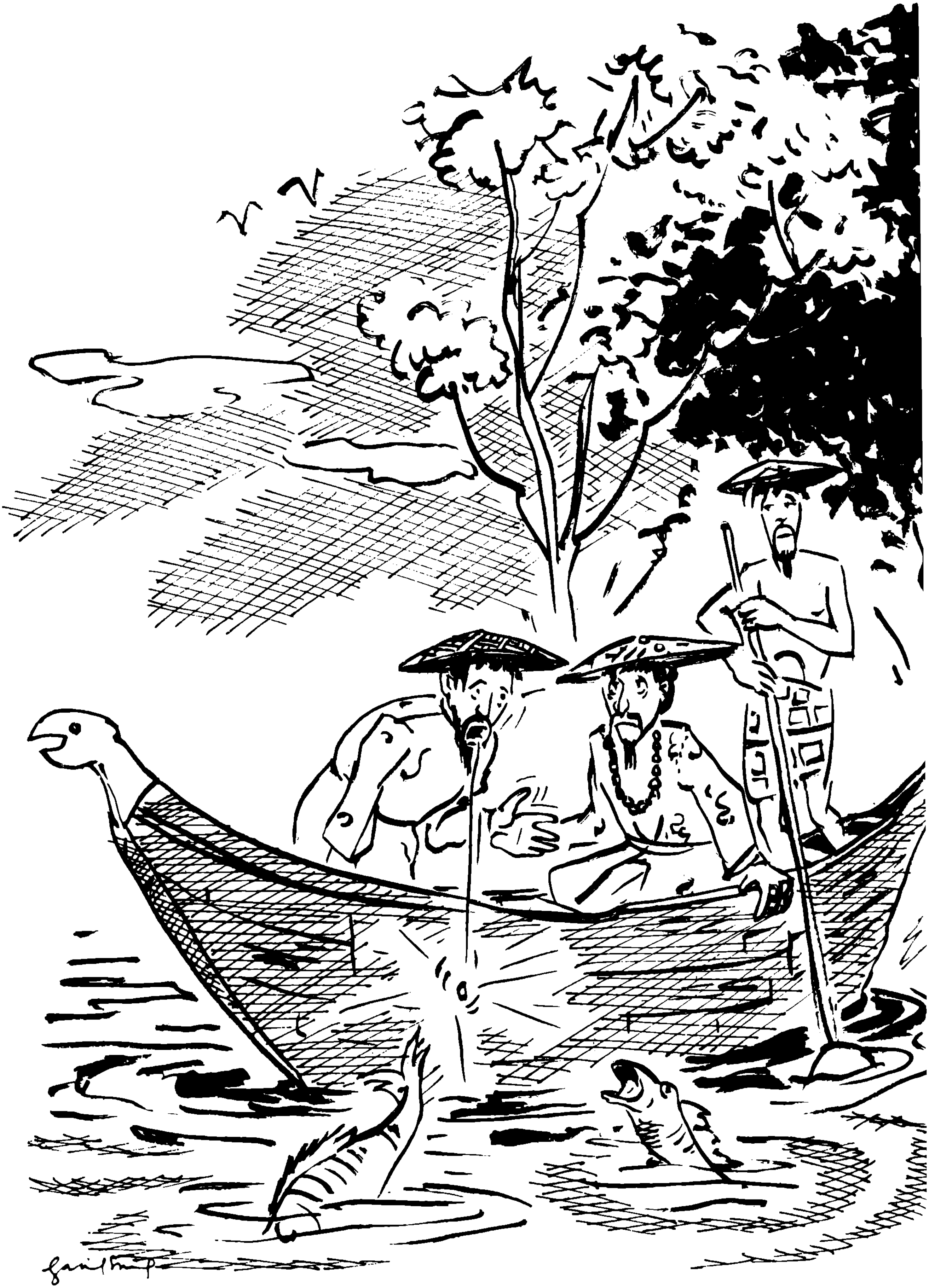
एक रात सांप ने दा त्रांग को जगाया और मनुष्यवाणी में बोलने लगा, ''मित्र, तुमने मुझ पर जो उपकार किया है उसका बदला तो मैं नहीं चुका सकता। अपनी मित्रता की निशानी के रूप में मेरी यह छोटी सी भेंट स्वीकार करो......''

ऐसा कहते हुए सांप ने दा त्रांग की हथेली पर एक मोती रख दिया और चला गया। ऐसे मोती के बारे में दा त्रांग ने सुना था कि यह मोती मुंह में रखते ही किसी भी प्राणी की भाषा समझी और बोली जा सकती है। इतना ही नहीं, उन प्राणियों से बातचीत भी की जा सकती है। उसने मोती संभालकर रख लिया और सो गया। दूसरे दिन वह जागा तो मोती सचमुच उसकी मुट्ठी में बंद था!

वह शिकार के लिए निकल पड़ा। साथ में मोती ले जाना वह नहीं भूला। शिकार ढूंढ़ते समय उसकी नजर एक ऊंचे पेड़ की डाल पर बैठे कौए पर पड़ी। दा त्रांग ने मुंह में मोती रखा और उस कौए से पूछा, ''भई कौए, आस-पास कहीं कोई जानवर हो तो बताओ।'' कौए ने पेड़ की बायीं ओर लगभग दो सौ कदमों पर एक हिरन होने की बात कही। दा त्रांग ने उस हिरन का शिकार किया और थोड़ा-सा मांस कौए को दिया। उस दिन से कौए की मदद से वह शिकार करने लगा।

एक बार कौए के लिए रखा हिस्सा सियार ले भागा। कौआ समझा, दा त्रांग ने जानबूझ कर उसका हिस्सा नहीं दिया। उसने दा त्रांग को सबक सिखाने का निश्चय किया।

हरदम की तरह एक सुबह जब दा त्रांग ने कौए से शिकार के बारे में पूछा तो कौआ बोला,'' सामने वाली झाड़ी में एक मोटा ताजा हिरन है पर वह बहुत ही चौकन्ना नजर आता है। उसके पास पहुंचने तक वह गायब हो जाएगा अतः यहीं से तीर चला दो।''



दा त्रांग ने झाड़ियों से आती आहट सुनी और आवाज की दिशा में तीर चला दिया। उन झाड़ियों में दूसरा शिकारी था। दा त्रांग का तीर लगते ही उसने दम तोड़ दिया। इसकी खबर लगते ही सैनिकों ने दा त्रांग को पकड़ा। राजा की आज्ञा से उसे जेल में डाल दिया गया।

अपने भाग्य को कोसता दा त्रांग जेल की जिंदगी बिताने लगा। अकेलापन उसे बहुत अखरता पर वह कर भी क्या सकता था? एक दिन उसे अपने मोती की याद आई। और अचानक उसे अकेलापन दूर करने का उपाय सूझा। अब वह मोती की मदद से जेल के आसपास आने वाले कीट-पतंगों, पक्षियों तथा चूहों से बातें किया करता। इन नये मित्रों से उसे कई नई बातें मालूम हुईं।

एक दिन चींटियों की फौज में मची खलबली को देखकर उसने चींटियों से इसका कारण पूछा। चींटियों ने बताया कि जल्दी ही पास वाली नदी में भयंकर बाढ़ आने वाली है। दा त्रांग ने यह बात जेल के अधिकारी को बताई। अधिकारी ने राजा को बाढ़ की पूर्वसूचना दी। पर राजा ने इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया।

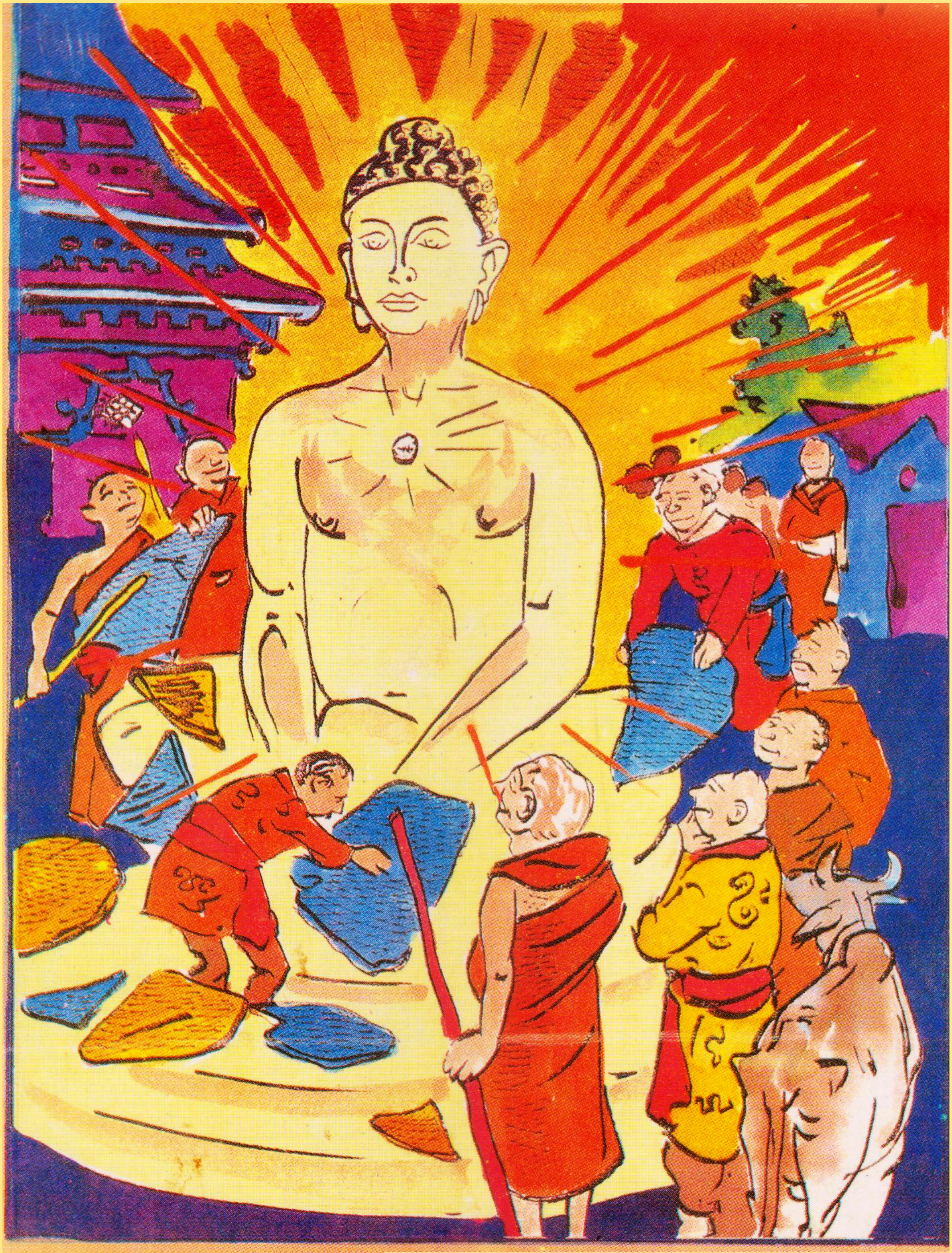
इस बात को दो दिन बीते ही थे कि नदी का पानी तेजी से बढ़ने लगा। सारा शहर बाढ़ की चपेट में आ गया। बाढ़ के कारण काफी नुकसान हुआ। राजा को जेल के अधिकारी की बात याद आई। उसने झट दा त्रांग को बुलवाया।

राजा के पूछने पर दा त्रांग ने ईमानदारी से सारी बातें सच-सच बतला दी। दा त्रांग के रहस्य का पता चलते ही राजा ने उसे दरबारी बना लिया अब राजा दा त्रांग को हरदम अपने साथ ही रखने लगा। दा त्रांग मोती की मदद से प्राणियों की बातचीत सुनता व राजा को बताता। इन बातों को सुनकर राजा का मनोरंजन होता। प्राणियों द्वारा मिली विभिन्न सूचनाओं के कारण राज्य को काफी लाभ भी हुआ।

एक शाम राजा दा त्रांग के साथ नौका-विहार कर रहा था। आकाश में उड़ते हुए पक्षियों का कलरव सुनकर राजा ने उनकी बातें जाननी चाहीं तो दा त्रांग ने अपने मुंह में मोती रख कर उनकी बातें राजा को बतलाई। कुछ देर बाद पानी में उछल-कूद मचाती मछलियों ने राजा का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया। सूरज की सुनहली किरणों में चमचमाती मछलियों की बातें सुनने की इच्छा राजा ने प्रकट की। दा त्रांग ने मोती की मदद से मछलियों की बातें सुनी। मछलियों की बातचीत राजा को बतलाने के लिए उसने मुंह खोला ही था कि उसके मुंह से मोती निकलकर नदी में गिर पड़ा और क्षणभर में ही डूब गया। दा त्रांग अपार दुःख में डूब कर रोने लगा।

राजा ने दा त्रांग को सांत्वना दी तथा मल्लाहों को मोती ढूंढ़ने की आज्ञा दी। मल्लाहों ने बहुत कोशिश की पर वे मोती नहीं ढूंढ़ पाए। दा त्रांग को बहुत दुःख हुआ। वह अकेला मोती ढूंढ़ने की कोशिश करता रहा लोगों ने दा त्रांग को बहुत समझाया पर वह अपनी जिद पर अड़ा रहा। रात-दिन की कड़ी मेहनत के कारण दा त्रांग दिन-ब-दिन कमजोर होता गया और अंत में एक दिन उसकी मृत्यु हो गई। नदी के किनारे ही दा त्रांग को दफनाया गया।

कहते है कि दा त्रांग की आत्मा केकड़ों में जाकर बस गई है और केकड़े दिन रात रेती उकेरकर उसमें वह मोती ढूंढ़ते रहते हैं। केकड़ों द्वारा उकेरे गए गड्ढों को पानी अपने प्रवाह से मिटा देता है, पर केकड़े अपना प्रयत्न नहीं छोड़ते!



प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार
ISBN: 81-230-0505-9
मूल्य : 50.00 रुपये